इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय
मानविकी विद्यापीठ

खंड

7

तद्धित प्रकरण

इकाई 27

तद्धित प्रकरण – अपत्यार्थक प्रत्यय भाग–1

इकाई 28

तद्धित प्रकरण – अपत्यार्थक प्रत्यय भाग–2

इकाई 29

मत्वर्थीय प्रत्यय

खंड 7 का परिचय

प्रिय शिक्षार्थियो, एम.ए. (संस्कृत) कार्यक्रम के द्वितीय पाठ्यक्रम के इस खंड में आप तद्धित प्रकरण का अध्ययन करेंगे। इस खंड की तीन इकाइयों में अपत्यार्थक एवं मत्वर्थीय प्रत्ययों के मूल स्वरूप एवं उनके प्रायोगिक स्वरूप से परिचय प्राप्त करेंगे। तद्धित प्रत्यय सुबन्त प्रातिपादिकों से होते हैं तथा इनसे वैदिक (वेद), लौकिक (लोक) जैसे उपयोगी रूप बनते हैं अतः भाषा अध्ययन में आपके लिए यह उपयोगी हैं। पाठ सुग्राह्य हो इसके लिए सूत्रों के साथ उनकी वृत्ति, पद–विवरण, सूत्रार्थ शब्दावली, उपयोगी पुस्तक सूची तथा रूपसिद्धि प्रक्रिया भी दी गई है जो छात्रोपयोगी सिद्ध होगी। खंड में इकाई संयोजन इस प्रकार है :

इकाई 27 : अपत्यार्थक प्रत्यय – भाग 1 (स्त्रीपुसाभ्यां – मातुरुत्सङ्ख्यासम्भद्रपूर्वायाः सूत्र तक)

इकाई 28 : अपत्यार्थक प्रत्यय – भाग 2 (स्त्रीभ्यो ढक् – कम्बोजाल्लुक सूत्र तक)

इकाई 29 : मत्वर्थीय प्रत्यय

आशा है आप तद्धित प्रकरण के उपरांत अपत्यार्थक एवं मत्वर्थीय प्रत्ययों के प्रयोग से कई प्रायोगिक शब्दरूप निर्मित करने में समर्थ हो सकेंगे जिससे भाषा कां परिष्कार होगा तथा उसमें सौष्ठव आएगा।

शुभकामनाओं सहित।

इकाई 27 तद्धित प्रकरण – अपत्यार्थक प्रत्यय भाग–1

इकाई की रूपरेखा

27.0 उद्देश्य

27.1 प्रस्तावना

27.2 अपत्यार्थक प्रत्यय भाग–1
(सूत्र – स्त्रीपुंसाभ्याम् से मातुरुत्संख्या तक – सूत्र, वृत्ति, सूत्रार्थ एवं रूपसिद्धि)

27.3 सारांश

27.4 शब्दावली

27.5 कुछ उपयोगी पुस्तकें

27.6 अभ्यास प्रश्न

27.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरांत शिक्षार्थियों को–

- अपत्यार्थक प्रत्ययों के मूल स्वरूप और उनके प्रायोगिक स्वरूप का परिचय प्राप्त होगा।
- प्रातिपदिक प्रकृति (मूलशब्द) से उनका संयोग होने पर प्रकृति के स्वरूप और अर्थ में सम्भावित परिवर्तन की जानकारी प्राप्त होगी; तथा
- संस्कृत के तद्धितान्त पदों के निर्माण एवं उनके प्रयोग का अभ्यास होगा।

27.1 प्रस्तावना

पिछले इकाइयों में आपने सुप्, तिङ् और कृत् प्रत्ययों का अध्ययन किया है। उनमें सुप् और तिङ् प्रत्ययों के प्रत्याहार हैं, अर्थात् 'सु से सुप्' तक 21 प्रत्ययों को सुप् और 'तिप् से महिङ्' तक 18 प्रत्ययों को तिङ् प्रत्यय कहते हैं। 'कृत्' शब्द क्रिया – सामान्यवाची कृ धातु से निष्पन्न होने से यह सूचना मिलती है कि धातु से होने वाले तिङ् से भिन्न प्रत्ययों को 'कृत्' कहते हैं। इसी आशय से कृत् संज्ञा विधायक सूत्र है – कृदतिङ्।

अब इस पाठ से तद्धित प्रत्ययों का अध्ययन आरम्भ होता है। यह प्रत्ययों का चौथा और अन्तिम भेद है। तद्धित सार्थक संज्ञा है 'तेभ्यः प्रयोगेभ्यो हिता इति तद्धिताः' – उन–उन प्रयोगों के लिए हितकर हैं – यह तद्धित पद का अर्थ है। तात्पर्य है कि तद्धित प्रत्ययों के

योग से ऐसे शब्द सिद्ध होते हैं जो प्रातिपादिकार्थ के साथ तत्संबन्धी अर्थ को भी प्रकट करते हैं, अतः संबंधी का भी बोध कराने से ये प्रत्यय प्रातिपदिकार्थ के हितैषी हैं। तत्संबन्धी इसके अर्थ अनेक हैं, जैसे – अपत्य, गोत्र, युवापत्य, देवता, समूह, जात, भव, विकार, भाव – कर्म आदि। इस पाठ में अपत्यार्थक तद्धित प्रत्ययों का विस्तार से अध्ययन किया जायगा जिसमें रूपसिद्धि भी संबद्ध होगी।

27.2 अपत्यार्थक प्रत्यय भाग–1
(सूत्र – स्त्रीपुंसाभ्याम् से मातुरुत्संख्या तक – सूत्र, वृत्ति, सूत्रार्थ एवं रूपसिद्धि)

अब अपत्य (सन्तान) अर्थ का अधिकार आरंभ होता है–

(नञ्–स्नञ् अधिकार और विधि – सूत्रम्)

सूत्र – स्त्री–पुंसाभ्यां नञ्–स्नञौ भवनात् 4/1/87

वृत्तिः – 'धान्यानां भवने' इत्यतः प्रागर्थेषु स्त्री – पुंसाभ्यां क्रमात् नञ् – स्नञौ स्तः। स्त्रैणः। पौंस्नः।

सूत्र पद विवरण – स्त्रीपुंसाभ्याम् पंचमी द्विवचनान्त, नञ्–स्नञौ प्रथमा द्विवचनान्त, भवनात् पंचमी एक वचनान्त कुल तीन पद हैं। 'स्त्री च पुमान् च' इस विग्रह में द्वन्द्व समास होने पर 'स्त्रीपुंस' शब्द अकारान्त हो जाएगा क्योंकि द्वन्द्व समास के बाद 'अच्' समासान्त प्रत्यय होता है, अन्यथा पुंस् शब्द सकारान्त है। अकारान्त होने से पंचमी द्विवचन में स्त्रीपुंसाभ्याम्' रूप होगा।

सूत्रार्थ – आगे भवनाद्यर्थक प्रकरण में 'धान्यानां भवने क्षेत्रे खञ् 5/2/19' सूत्र है। उस सूत्र से पहले निर्दिष्ट अपत्य, समूह, जात, भव, गुण–धर्म (भाव) कर्म आदि सभी संभावित अर्थों में स्त्री और पुंस् शब्दों से क्रमशः नञ् और स्नञ् प्रत्यय होते हैं। नञ्–स्नञ् प्रत्ययों में ञकार इत्संज्ञक है, अतः ये प्रत्यय 'ञित्' हैं। इनमें क्रमशः न और स्न का प्रयोग होता है।

सूत्र के उदाहरण हैं– स्त्रैणः, पौंस्नः।

स्त्रैणः – स्त्रियाः अपत्यम्, स्त्रीणां समूहः, स्त्रीषु भवः इत्यादि लौकिक विग्रह में तथा 'स्त्री ङस् अपत्य सु' इत्यादि अलौकिक विग्रह में 'स्त्री पुंसाभ्याम्' सूत्र से अपत्य आदि अर्थों में नञ् प्रत्यय, 'हलन्त्यम्' सूत्र से प्रत्यय में 'ञ्' की इत्संज्ञा, 'तस्य लोपः' सूत्र से उसका लोप, अर्थात् अनुबन्ध लोप होने पर 'उक्तार्थानाम् अप्रयोगः' इस न्याय से 'अपत्य सु' के स्थान पर 'न' का प्रयोग होगा, क्योंकि उसी अर्थ में 'न' प्रत्यय की विधि है, अतः 'स्त्री ङस् न' इस समूह की 'कृत्तद्धित – समासाश्च' सूत्र से प्रातिपदिक संज्ञा होने पर 'सुपो धातु–प्रातिपादिकयोः' सूत्र से सुप् विभक्ति का लोप होकर 'स्त्री न' इस स्थिति में प्रत्यय के ञित् होने से 'तद्धितेष्वचामादेः' सूत्र से आदि अच् ईकार को ऐकार वृद्धि होने पर 'स्त्रैन' स्थिति में 'अट्–कुप्वाङ्नुम्व्यवायेऽपि' सूत्र से णत्व होकर 'स्त्रैण' इस प्रातिपादिक से प्रथमा विभक्ति में एक वचन की विवक्षा होने

पर 'सु' विभक्ति का अनुबन्ध लोप होकर 'स्त्रैणस्' स्थिति में 'ससजुषो रुः' सूत्र से स् को रु, अनुबन्ध लोप होने पर 'स्त्रैण' स्थिति में 'खरवसानयोर्विसर्जनीयः' सूत्र से 'र' को विसर्ग होकर पुंलिंग में स्त्रैणः रूप सिद्ध होता है।

विशेष – तद्धित प्रकरण के प्रथम पाठ का प्रथम उदाहरण 'स्त्रैणः' पद है, अतः इसकी रूप–सिद्धि की प्रक्रिया में उपयोगी पूर्व सूत्रों को भी प्रदर्शित किया गया है। वे आगे के उदाहरणों की रूपसिद्धि में भी आवश्यक हैं। वहाँ अनुबन्ध–लोप, आदिवृद्धि, रुत्व–विसर्ग आदि सांकेतिक शब्दों से उनका उल्लेख होगा। ञित् और णित् प्रत्यय पर में होने पर 'तद्धितेष्वचामादेः' सूत्र से तथा कित् प्रत्यय होने पर 'किति च' सूत्र से आदिवृद्धि होती है।

पदार्थ बोधक वाक्य को विग्रह कहते हैं– 'वृत्त्यर्थावबोधकं वाक्यं विग्रहः', जैसे– 'स्त्रियाः अपत्यम्' यह विग्रह या लौकिक–विग्रह है। किन्तु सूत्र की प्रवृत्ति 'स्त्री ङस् अपत्य सु' अथवा 'स्त्री ङस् अपत्यम्' इस षष्ठ्यन्त स्थिति में होती है, अतः वैयाकरण प्रातिपदिक प्रकृति और विभक्ति की असंयुक्त स्थिति को अलौकिक विग्रह कहते हैं। आगे रूपसिद्धि में केवल लौकिक विग्रह का निर्देश है।

पौंस्नः – पुंसः अपत्यं पुमान् (पुरुष की पुरुष सन्तान), पुंसु भवः (पुरुषों में होने वाला रोगादि संबन्धी), पुंसां समूहः (पुरुषों का समूह) इत्यादि लौकिक विग्रहों में तथा 'पुंस् ङस् अपत्यम्' 'पुंस् सुप् अपत्यम्' अथवा 'पुंस् आम् अपत्यम्' इत्यादि अलौकिक विग्रह में पुंस् शब्द से 'स्त्रीपुंसाभ्याम्' – इत्यादि सूत्र से स्नञ् प्रत्यय अनुबन्ध लोप होने पर 'पुंस् ङस् स्न' इत्यादि समुदाय की 'कृत्तद्धित समासाश्चा' सूत्र से प्रातिपदिक संज्ञा तथा 'सुपो धातु प्रातिपदिकयोः' सूत्र से मध्यवर्ती विभक्ति का लोप होने पर 'पुंस् स्न' इस स्थति में आदिवृद्धि होने पर 'पौंस् स्न' इस स्थिति में हलादि प्रत्यय पर में होने से 'स्वादिष्वसर्वनामस्थाने' सूत्र से 'पौंस्' की पदसंज्ञा होने पर 'संयोगान्तस्य लोपः' सूत्र से अन्त्य सकार का लोप होकर 'पौंस्न' प्रातिपदिक से पुंलिंग प्रथमा एकवचन में सु विभक्ति का रुत्व–विसर्ग होकर 'पौंस्नः' रूप की सिद्धि होती है।

(अपत्यार्थ में प्रत्यय विधि का सूत्र)

सूत्र – तस्यापत्यम् 4/1/92

वृत्तिः – षष्ठ्यन्तात् कृतसन्धेः समर्थाद् अपत्येऽर्थे उक्ता वक्ष्यमाणाश्च प्रत्यया वा स्युः।

सूत्रार्थ – इस सूत्र में तस्य और अपत्यम् दो पद हैं। तस्य यह सर्वनाम सभी षष्ठ्यन्त पदों का परामर्शक है। षष्ठ्यन्त कृत–सन्धि समर्थ पद से अपत्य अर्थ में पूर्वोक्त अण् आदि प्रत्यय और इस प्रकरण में आगे कहे जाने वाले इञ्–अञ्–यञ्–फक् आदि प्रत्यय विकल्प से हों।

व्याख्या – इस सूत्र में 'प्राग्दीव्यतोऽण्' अधिकार सूत्र से 'अण्' प्रत्यय की अनुवृत्ति होती है तथा 'समर्थानां प्रथमाद् वा' अधिकार सूत्र से 'समर्थ' और 'वा' पद की अनुवृत्ति होती है। सन्धि किया हुआ, अतः अर्थबोधन में समर्थ को कृतसन्धि समर्थ पद कहते हैं। जिस पद में

सन्धि कार्य नहीं हुआ जैसे– 'रमा ईश' अथवा 'सु उत्थित' आदि पदों से यह प्रत्यय नहीं होगा। यदि अकृत सन्धि और असमर्थ से प्रत्यय होने लगे तब 'सु उत्थित' से अपत्य अर्थ में इञ् प्रत्यय होने पर 'तद्धितेषु अचाम् आदेः' इस सूत्र से आदि अच् सकारोत्तर 'उ' को 'औ' वृद्धि और उसको 'एचोऽयवायावः' सूत्र से 'आव्' आदेश होने लगेगा, क्योंकि 'औ' के पर में 'उ' अच् है। ऐसी स्थिति में 'सावुत्थितिः' अनिष्ट रूप होगा, किन्तु इष्ट रूप है – सौत्थितिः। अतः कृत सन्धि और समर्थ पद से ही प्रत्यय होते हैं। जब तद्धित–वृत्ति की विविक्षा होगी तब 'औपगवः' आदि में अण् आदि तद्धित प्रत्ययों का प्रयोग होगा, अन्यथा 'उपगोः अपत्यम्' आदि विग्रह वाक्यों का प्रयोग होगा। अतः तद्धित प्रत्यय विकल्प से होते हैं।

'यह सूत्र अपत्य अर्थ का निर्देश करता है। इस अर्थ में अण् प्रत्यय का अधिकार है। अतः इस अर्थ में अन्य सूत्रों के द्वारा विशेष प्रातिपदिक प्रकृति से जिन विशेष प्रत्ययों का विधान है, वे प्रत्यय आधिकारिक सामान्य अण् के बाधक हैं।

(गुण आदेश का विधि सूत्र)

सूत्र – ओर्गुणः 5/4/145

वृत्तिः – उवर्णान्तस्य भस्य गुणस्तद्धिते। उपगोरपत्यम्–औपगवः। आश्वपतः। दैत्यः। औत्सः। स्त्रैणः। पौंस्नः।

पद विवरण – सूत्र में उ शब्द का ओः षष्ठ्यन्त तथा गुणः प्रथमान्त दो पद हैं।

सूत्रार्थ – तद्धित प्रत्यय पर में होने पर उवर्णान्त भसंज्ञक को गुण होता है।

'यकारादि अथवा अजादि प्रत्यय पर में होने पर 'यचि भम्' सूत्र से प्रातिपदिक प्रकृति के अन्त्य अच् की 'भ' संज्ञा होती है।

औपगवः – उपगोः अपत्यं पुमान् (उपगु की पुरुष सन्तान) इस विग्रह में 'तस्यापत्यम्' सूत्र से अण् प्रत्यय अनुबन्ध लोप 'उपगु ङस् अ' की प्रातिपदिक संज्ञा विभक्ति का लोप होकर 'उपगु अ' के आदि अच् उकार को 'तद्धितेषु अचाम् आदेः' सूत्र से औकार वृद्धि होने पर 'औपगु अ' स्थिति में भसंज्ञक अन्तिम उकार को 'ओर्गुणः' सूत्र से ओकार गुण और उसको 'एचोऽयवायावः' सूत्र से अवादेश होने पर 'औपग् अव् अ' में वर्णसम्मेलन होकर 'औपगव' प्रातिपदिक से पुंलिंग प्रथमा एकवचन में सु विभक्ति उसको ससजुषो 'रूः' सूत्र से रुत्व अनुबन्ध लोप 'खरवसानयो' विसर्जनीयः' सूत्र से 'र' को विसर्ग होकर 'औपगवः' रूप सिद्ध होता है।

आश्वपतः – अश्वपतेरपत्यं पुमान् – इस विग्रह में षष्ठ्यन्त 'अश्वपति ङस् अपत्यम्' से अपत्य अर्थ में 'अश्वपत्यादिभ्यश्च' सूत्र से अण् प्रत्यय, अनुबन्ध लोप, प्रातिपदिकसंज्ञा और विभक्तिलोप होकर 'अश्वपति अ' में आदिवृद्धि 'आश्वपति अ' स्थिति में भसंज्ञक इकार का 'यस्येति च' सूत्र से लोप 'आश्वपत् अ' में वर्णसम्मेलन होकर 'आश्वपत' से पुंलिङ्ग प्रथमा एकवचन में 'आश्वपतः' रूप सिद्ध होता है।

दैत्यः – दितेरपत्यं पुमान् – इस विग्रह में षष्ठ्यन्त 'दिति ङस् अपत्यम्' से 'दित्यदित्यादित्य–पत्युत्तरपदाण्ण्यः' सूत्र से ण्य प्रत्यय, अनुबन्धलोप, प्रातिपदिकसंज्ञा, विभक्तिलोप होकर 'दिति य' में आदिवृद्धि और भसंज्ञक अन्तिम इकार का यस्येति लोप होने पर दैत्य प्रातिपदिक से पुंलिंग प्रथमा एकवचन में 'दैत्यः' रूप सिद्ध होता है।

औत्सः – उत्सस्यापत्यं पुमान् – इस विग्रह में षष्ठ्यन्त 'उत्स ङस्' से 'उत्सादिभ्योऽञ्' सूत्र से अञ् प्रत्यय, अनुबन्ध लोप, प्रातिपदिक संज्ञा, विभक्ति लोप होकर 'उत्स अ' स्थति में आदिवृद्धि और सकारोत्तर अकार का 'यस्येति च' सूत्र से लोप होकर 'औत्स् अ' = औत्स से प्रथमा विभक्ति के एक वचन में सु विभक्ति को रुत्व और विसर्ग होकर 'औत्सः' रूप सिद्ध होता है।

स्त्रैणः – पौंस्नः की रूप सिद्धि पहले आ चुकी है।

('गोत्र' संज्ञा सूत्र)

सूत्र – अपत्यं पौत्र–प्रभृति गोत्रम् 4/1/162

वृत्तिः – अपत्यत्वेन विवक्षितं पौत्रादि गोत्रसंज्ञं स्यात्।

सूत्र पद विवरण – अपत्यम् प्रथमान्त, पौत्र प्रभृति प्रथमान्त एक वचन नपुंसक लिंग, गोत्रम् नपुंसक लिंग प्रथमान्त कुल तीन पद हैं। पौत्र – प्रभृति में बहुव्रीहि समास और अपत्यम् का विशेषण है।

सूत्रार्थ – तीसरी पीढ़ी पौत्र और उससे आगे की चौथी, पाँचवीं आदि सभी पीढ़ियों को अपत्य रूप में कहना चाहें तो उनकी गोत्र संज्ञा होती है।

(नियम सूत्र)

सूत्र –एको गोत्रे 4/1/93

वृत्तिः – गोत्रे एक एव अपत्यप्रत्ययः स्यात्। उपगोर्गोत्रापत्यम् औपगवः।

सूत्र पद विवरण – एकः प्रथमान्त और गोत्रे सप्तम्यन्त पद है।

सूत्रार्थ – गोत्र अर्थ में एक ही अपत्य प्रत्यय हो। उपगु के पुत्र, पौत्र, प्रपौत्र आदि आगे की सभी पीढ़ियों के पुत्रों को :औपगवः' (उपगु का गोत्र) ही कहेंगे। अतः उपगु से एक ही अण् प्रत्यय होगा, जो प्रसंगानुसार विवक्षित गोत्र का बोधक होगा।

('यञ्' प्रत्यय का विधि सूत्र)

सूत्र – गर्गादिभ्यो यञ् 4/1/105

वृत्तिः – गोत्रापत्ये। गर्गस्य गोत्रापत्यं गार्ग्यः। वात्स्यः।

सूत्र पद विवरण – गर्गादिभ्यः पंचमी बहुवचनान्त, यञ् प्रथमान्त दो पद हैं। गर्ग आदि में बहुव्रीहि समास है।

सूत्रार्थ – गर्गादि गण में पठित गर्ग आदि षष्ठ्यन्त समर्थ पद से गोत्रापत्य अर्थ में यञ् प्रत्यय हो।

व्याख्या – 'गर्ग' शब्द जिनके आदि = आरंभ में है, उन शब्दों के समूह को गर्गादि गण कहते हैं। इस गण में 107 शब्द हैं – गर्ग, वत्स, वाजासे, संकृति, अज, व्याघ्रपात्, विदभृत्, प्राचीनयोग, अगस्ति, पुलस्ति, चमस, रेभ, अग्निवेश, शङ्ख, शट, शक, एक, धूम, अवट, मनस्, धनञ्जय, वृक्ष, विश्वावसु, जरमाण, लोहित, शंसित, बभ्रु, वल्गु, मण्डु, गण्डु, शङ्कु, लिगु, गुहलु, मन्तु, मङ्क्षु, अलिगु, जिगीषु, मनु, तन्तु, मनायीसूनु, कथक, कन्थक, ऋक्ष, तृक्ष, वृक्ष, तनु, तरुक्ष, तलुक्ष, तण्ड, वतण्ड, कपिकत, कपि, कत, कुरुकत, अनडुह्, कण्व, शकल, गोकक्ष, अगस्त्य, कण्डिनी, यज्ञवल्क, पर्णवल्क, अभयजात, विरोहित, वृषगण, रहूगण, शण्डिल, वर्णक, चणक, चुलुक, मुद्गल, मुसल, जमदग्नि, पराशर, जतूकर्ण, जातूकर्ण, महित, मन्त्रित, अश्मरथ, शर्कराक्ष, पूतिमाष, स्थूरा, अदरक, अररक, एलाक, पिङ्गल, कृष्ण, गोलन्द, उलूक, तितिक्ष, भिषज, भिषज्, भिष्णज, भडित, भण्डित, दल्भ, चेकित, चिकित्सित, देवहू, इन्द्रहू, एकलु, पिप्पलू, बृहदग्नि, सुलोहिन्, सुलाभिन्, उक्थ, कुटीगु। यह गर्गादि गण है।

गार्ग्यः – गर्गस्य गोत्रापत्यं पुमान् – इस विग्रह में षष्ठ्यन्त गर्ग से 'गर्गादिभ्यो यञ्' सूत्र से यञ् प्रत्यय, अनुबन्ध लोप, प्रातिपदिक संज्ञा, विभक्ति लोप होने पर 'गर्ग य' इस स्थिति में आदिवृद्धि और भसंज्ञक अन्तिम अच् का 'यस्येति च' सूत्र से लोप होकर 'गार्ग्य' से पुंलिंग प्रथमा एकवचन में सु को रुत्व और विसर्ग होकर गार्ग्यः रूप सिद्ध होता है।

वात्स्यः – वत्सस्य गोत्रापत्यं पुमान् – इस विग्रह में षष्ठ्यन्त वत्स से 'गर्गादिभ्यो यञ्' सूत्र से यञ् प्रत्यय, अनुबन्ध लोप प्रातिपदिक संज्ञा, विभक्ति लोप होकर 'वत्स य' इस स्थिति में आदिवृद्धि, भसंज्ञक सकारोत्तर अकार का यस्येति लोप होने पर 'वात्स्य' से प्रथमैकवचन में सु विभक्ति को रुत्व और विसर्ग होकर 'वात्स्यः' रूप निष्पन्न होता है।

(यञ्–अञ् के लुक् का विधि सूत्र)

सूत्र – यञ्–अञोश्च 2/4/64

वृत्तिः – गोत्रे यद् यञन्तम् अञन्तं च तदवयवयोरेतयोर्लुक् स्यात् तत्कृते बहुत्वेय न तु स्त्रियाम्। गर्गाः। वत्साः।

सूत्र पद विवरण – यञ् – अञोः षष्ठी द्विवचनान्त, च अव्यय दो पद हैं। 'यञ–अञोः में द्वन्द्व समास है– यञ् च अञ् च इति तयोः। च अव्यय से लुक् की अनुवृत्ति होती है।

सूत्रार्थ – गोत्रार्थक जो यञन्त और अञन्त प्रातिपदिक, उनके अवयव यञ् और अञ् का लुक् हो, गोत्र के कारण बहुवचन होने पर, किन्तु स्त्रीलिंग में लुक् नहीं होता। अर्थात् उक्त दोनों प्रत्ययों का पुंलिंग बहुवचन में लुक् होता है।

व्याख्या – 'प्रत्ययस्य लुक् श्लु लुपः' सूत्र से प्रत्यय के अदर्शन को ही कहीं लुक्, कहीं श्लु और लुप् कहा है। प्रत्यय की ही ये तीनों संज्ञाएँ हैं। जिस प्रत्यय को लुक्, श्लु या लुप् होगा, उस प्रत्यय का अदर्शन यानी लोप हो जाता है। प्रत्यय आदि में संयुक्त अनुबन्ध की 'हलन्त्यम्' अथवा 'उपदेशेऽजनुनासिक इत्' सूत्र से इत् संज्ञा होती है, तदनन्तर 'तस्य लोपः' सूत्र से इत् संज्ञक अनुबन्ध का लोप होता है। लोप संज्ञा अनुबन्धों की होती है तथा 'हल् ङ्याब्भ्यो दीर्घात् सुति स्यपृक्तं हल्' सूत्र से सु, ति और सि प्रत्ययों का भी 'लोप' होता है। एवञ्च लुक्, श्लु, लुप् और लोप इन चारों शब्दों से प्रत्ययों का अदर्शन होता हे, तथापि इनमें निम्नांकित अन्तर हैं –

1. लुक् होने पर प्रत्यय का लोप होता है, किन्तु प्रत्यय निमित्तक आदिवृद्धि आदि कार्य नहीं होते हैं। जैसे– 'गर्ग' शब्द से विहित यञ् प्रत्यय का लोप हो जाने पर 'तद्धितेषु अचाम् आदेः' अथवा 'किति च' इत्यादि सूत्र से आदिवृद्धि नहीं होती है, क्योंकि 'न लुमताङ्गस्य' यह सूत्र प्रत्ययाश्रित कार्य का निषेध करता है।
2. श्लु होने पर द्वित्व कार्य होता है। जैसे– दा धातु से विहित 'शप्' को श्लु होने से दा धातु को द्वित्व होकर 'ददाति' रूप निष्पन्न होता है।
3. प्रत्यय को लुप् होने पर वचन और लिंग का अतिदेश होता है। जैसे – 'पञ्चालानां निवासः जनपदः' इस विग्रह में 'पञ्चाल' से निवास अर्थ में विहित अण् प्रत्यय का 'जनपदे लुप्' सूत्र से लुप् होने से 'पञ्चाल' शब्द में बहुवचन और पुंलिंग का 'लुपि युक्तवद् व्यक्तिवचने' इस सूत्र से अतिदेश होता हैं अतः यहाँ 'पञ्चालानाम्' प्रकृति में विद्यमान बहुवचन और पुंलिंग का अतिदेश होने से 'पञ्चालाः जनपदः' प्रयोग सिद्ध होता है।
4. प्रत्यय का लोप होने पर 'प्रत्ययलोपे प्रत्ययलक्षणम्' इस सूत्र से प्रत्यय के अभाव में भी तन्निमित्तक गुण आदि कार्य होते हैं। जैसे– हे हरे! में संबुद्धि 'सु' प्रत्यय का 'एङ् ह्रस्वात् सम्बुद्धेः' इस सूत्र से लोप हो जाने पर भी 'ह्रस्वस्य गुणः' सूत्र से गुण होता है।

एवंच लुक्, श्लु, लुप् और लोप में प्रत्यय का अदर्शन समान होने पर भी कार्य की दृष्टि से इनमें परस्पर भेद है। इसीलिए ये संज्ञाएँ परस्पर भिन्न–भिन्न फलवती हैं– 'या या संज्ञा सा सा फलवती' यह व्याकरण शास्त्र का सिद्धान्त है।

गर्गाः – गर्गस्य गोत्रापत्यानि पुंमासः – इस विग्रह में षष्ठ्यन्त गर्ग से 'गर्गादिभ्यो यञ्' सूत्र से यञ् प्रत्यय, अनुबन्ध लोप, प्रातिपदिक संज्ञा और विभक्ति लोप होने पर 'गर्ग य' इस स्थिति में गोत्रापत्य में बहु वचन की विवक्षा होने से 'यञञोश्च' सूत्र से 'यञ्' प्रत्यय का लुक् होने से 'तद्धितेषु अचाम आदेः' सूत्र से आदिवृद्धि नहीं होगीय क्योंकि 'न लुमताङ्गस्य' यह

सूत्र तन्निमित्तक कार्य का निषेध करता है। अतः अवशेष गर्ग से प्रथमा बहुवचन में जस् विभक्ति, अनुबन्ध लोप पूर्व सवर्ण दीर्घ और रुत्व एवं विसर्ग होकर :गर्गाः रूप सिद्ध होता है।

वत्साः – वत्सस्य गोत्रापत्यानि पुमांसः– इस विग्रह में षष्ठ्यन्त वत्स से प्रत्ययार्थ अपत्य के बहुत्व में 'गर्गादिभ्यो यञ्' सूत्र से विहित यञ् का 'यञञोश्च' सूत्र से लुक् होने के कारण आदिवृद्धि न होने से अवशेष 'वत्स' से प्रथमा बहु वचन में 'वत्साः' रूप निष्पन्न होता है।

(युव संज्ञा का सूत्र)

सूत्र – जीवति तु वंश्ये युवा 4/1/163

वृत्तिः – वंश्ये पित्रादौ जीवति पौत्रादेर्यद् अपत्यं चतुर्थादि तद् युवसंज्ञमेव स्यात्।

सूत्र पद का विवरण – जीवति सप्तम्यन्त, तु अव्यय, वंश्ये सप्तम्यन्त, युवा प्रथमान्त कुल चार पद हैं। वंश्ये जीवति का विशेषण है। तु निर्धारण अर्थ को प्रकट करता है।

सूत्रार्थ – वंश में हुए पिता, पितामह के जीवित रहते पौत्र का जो पुत्र चौथी, पाँचवीं आदि आगे की किसी पीढ़ी का पुत्र हो, उसकी युवसंज्ञा होती है।

(युवसंज्ञा के विषय में नियम सूत्र)

सूत्र – गोत्राद् यूनि अस्त्रियाम् 4/1/94

वृत्तिः – यूनि अपत्ये गोत्रप्रत्ययान्ताद् एव प्रत्ययः स्यात्य स्त्रियां तु न युवसंज्ञा।

सूत्र पद का विवरण – गोत्राद् पंचम्यन्त, यूनि सप्तम्यन्त और अस्त्रियाम् सप्तम्यन्त कुल तीन पद हैं। पूर्व सूत्र 'एको गोत्रे' से एकः (एक ही प्रत्यय) पद की यहाँ अनुवृत्ति होती है।

सूत्रार्थ – युवापत्य अर्थ में गोत्रप्रत्ययान्त से ही प्रत्यय हो, स्त्रीलिंग में युवसंज्ञा नहीं होती है।

(फक् प्रत्यय विधि सूत्र)

सूत्र – यञिञोश्च 4/1/101

वृत्तिः – गोत्रे यौ यञ्–इञौ, तदन्तात् फक् स्यात्।

सूत्र पद का विवरण – यञ् इञोः पंचम्यर्थ में षष्ठी द्विवचनान्त, च अव्यय कुल दो पद हैं। इस सूत्र में 'नडादिभ्यः फक्' सूत्र से फक् की अनुवृत्ति का सूचक 'च' है।

सूत्रार्थ – गोत्र अर्थ में जो यञ् और इञ् प्रत्यय होते हैं, तदन्त प्रातिपदिक से युवापत्य अर्थ में फक् प्रत्यय हो। फक् का ककार इत्संज्ञक अनुबन्ध है, अतः यह प्रत्यय 'कित्' है और इसके पर में रहने पर 'किति च' सूत्र से आदिवृद्धि होती है।

('आयन्' आदि आदेश का विधि सूत्र)

सूत्र – आयन्–एय्–ईन्–ईय्–इयः फ–ढ–ख–छ–घां प्रत्ययादीनाम् 7/1/2,

वृत्तिः – प्रत्ययादेः फस्य आयन्, ढस्य एय्, खस्य ईन्, छस्य ईय्, घस्य इय् स्युः। गर्गस्य युवापत्यं गार्ग्यायणः। दाक्षायणः।

पद विवरण – इस सूत्र में आयनेयीनीयियः प्रथमा बहुवचनान्त, फढखछघाम् षष्ठी बहुवचनान्त तथा प्रत्ययादीनाम् षष्ठी बहुवचनान्त विशेषण कुल तीन पद हैं।

सूत्रार्थ – प्रत्यय के आदि 'फ्' को आयन्, 'ढ्' को एय्, 'ख्' को ईन्, 'छ्' को ईय् और 'घ्' को इय् आदेश हो।

गार्ग्यायणः – गर्गस्य युवापत्यं पुमान् – इस विग्रह में षष्ठ्यन्त गर्ग से 'गोत्राद् यून्यस्त्रियाम्' इस नियम सूत्र के अनुसार पहले 'गर्गादिभ्यो यञ्' सूत्र से यञ् प्रत्यय होकर 'गार्ग्य' यञन्त से युवापत्य अर्थ में 'यञिञोश्च' सूत्र से फक् प्रत्यय अनुबन्ध लोप होने पर 'गार्ग्य फ्' इस स्थिति में अकार रहित केवल 'फ्' के स्थान पर 'आयनेयीनीयियः' – इत्यादि सूत्र से आयन् आदेश होकर 'गार्ग्य आयन् अ' इस स्थति में 'किति च' सूत्र से आदिवृद्धि और आयन् के पूर्ववर्ती भसंज्ञक अकार का यस्येति लोप होकर 'गार्ग्यायन' एक पद होने से 'अट्कुप्वाङ्' इत्यादि सूत्र से णत्व होने पर गार्ग्यायण से प्रथमा एकवचन में सु विभक्ति को रुत्व और विसर्ग होकर गार्ग्यायणः रूप सिद्ध होता है।

दाक्षायणः – दक्षस्य युवापत्यम् – इस विग्रह में 'गोत्राद् यूनि' – इस सूत्र के नियमानुसार पहले 'अत इञ्' सूत्र से गोत्रापत्यार्थक इञ् प्रत्यय, आदिवृद्धि आदि होकर 'दाक्षि' इञन्त प्रातिपदिक से 'यञिञोश्च' सूत्र से युवापत्यार्थ में फक् प्रत्यय एवं पूर्वोक्त आयन् आदेश, यस्येति लोप एवं णत्वादि कार्य होकर प्रथमा एक वचन में सु विभक्ति को रुत्व और विसर्ग होने से दाक्षायणः रूप सिद्ध होता है।

(इञ् प्रत्यय का विधि सूत्र)

सूत्र – अत इञ् 4/1/5

वृत्तिः – अपत्येऽर्थे। दाक्षिः।

सूत्र पद विवरण – इसमें 'अतः' पञ्चम्यन्त एवं इञ् प्रथमान्त दो पद हैं। 'अत्' में तपर ह्रस्व अकारान्त का बोधक है।

सूत्रार्थ – ह्रस्व अकारान्त षष्ठ्यन्त समर्थ पद से अपत्यार्थ में इञ् प्रत्यय हो। प्रत्यय में 'ञ्' अनुबन्ध है, अतः यह ञित् प्रत्यय आदिवृद्धि में निमित्त है।

दाक्षिः – दक्षस्य अपत्यं पुमान् – इस विग्रह में षष्ठ्यन्त 'दक्ष ङस् अपत्यम्' इस अलौकिक विग्रह में ह्रस्व अकारान्त दक्ष से अपत्यार्थ में 'अत इञ्' सूत्र से इञ् प्रत्यय होने पर 'कृत्तद्धित समासाश्च' सूत्र से प्रातिदिक (प्रातिपादिक) संज्ञा तथा 'सुपो धातु प्रातिपदिकयोः' सूत्र

से विभक्ति का लोप होने पर 'दक्ष इ' इस स्थिति में 'तद्धितेषु अचाम् आदेः' सूत्र से आदिवृद्धि, 'यस्येति च' सूत्र से भसंज्ञक अन्त्य इकार का लोप आदि कार्य होकर प्रथमा विभक्ति के एक वचन में यह रूप सिद्ध होता है।

(इञ् प्रत्यय का विधि सूत्र)

सूत्र – बाह्वादिभ्यश्च 4/1/96

सूत्र पद विवरण – इसमें बाह्वादिभ्यः पंचम्यन्त और च इञ् प्रत्यय का समुच्चायक अव्यय दो पद हैं।

सूत्रार्थ – बाहु आदि 60 शब्दों के समूह को बाह्वादि गण कहते हैं। उस गण के षष्ठ्यन्त समर्थ पदों से अपत्यार्थ में इञ् प्रत्यय होता है। बाहु आदि अकारान्त न होने से 'अत इञ्' सूत्र से अप्राप्त इञ् का विधान इससे होता है। यह बाह्वादि आकृति गण है, अतः गण से बाहरी शब्दों में भी यदि यह इञ् हुआ हो तो उसे इस गण का शब्द समझना चाहिए।

बाह्वादि गण – बाहु, उपबाहु, उपवाकु, निवाकु, शिवाकु, वटाकु, उपनिन्दु, उपविन्दु, वृषली, वृकला, चूडा, बलाका, मूषिका, कुशला, भगला, छगला, ध्रुवका, धुवका, सुमित्रा, दुर्मित्रा, प्रुष्करसद्, अनुहरत्, देवशर्मन्, अग्निशर्मन्, भद्रशर्मन्, सुशर्मन्, कुनामन्, सुनामन्, पञ्चन्, सप्तन्, अष्टन्। अमितौजसः सलोपश्च (अमितौजस् से इञ् प्रत्यय होता है और 'स्' का लोप भी)। मुधावत्, उदञ्चु, शिरस्, माष, शराविन्, मरीचि, क्षेमवृद्धिन्, शृङ्खलतोदिन्, खरनादिन्, नगरमर्दिन्, प्राकारमर्दिन्, लोमन्, अजीगर्त, कृष्ण, युधिष्ठिर, अर्जुन, साम्ब, गद, प्रद्युम्न, राम, रक्तम्, उदङ्क। उदकः संज्ञायाम् (उदक से व्यक्तिवाची संज्ञा में)। संभूयोऽम्भसोः सलोपश्च (संभूयस् और अम्भस् को इञ् प्रत्यय तथा 'स्' का लोप होता है)। यह आकृति गण है, अतः सात्त्वकिः, सात्यकिः, जाङ्घिः, ऐन्द्रशर्मिः, आजधेनविः इत्यादि शब्द रूप भी इस सूत्र से इञ् प्रत्यय होकर निष्पन्न होते हैं।

बाहविः – बाहोः अपत्यं पुमान् – इस विग्रह में षष्ठ्यन्त 'बाहु ङस् अपत्यम्' से 'बाह्वादिभ्यश्च' सूत्र से इञ् प्रत्यय, अनुबन्ध लोप, प्रातिपदिक संज्ञा विभक्ति लोप होकर 'बाहु इ' में आदि अच् वृद्ध होने पर भी 'पर्जन्यवल्लक्षणप्रवृत्तिः' इस न्याय से 'तद्धितेषु अचाम् आदेः' सूत्र से आदिवृद्धि 'ओर्गुणः' सूत्र से उकार को गुण, अवादेश, विभक्ति कार्य होकर प्रथमा विभक्ति के एकवचन में यह रूप सिद्ध होता है।

औडुलोमिः – उडुलोम्नः अपत्यम् – इस विग्रह में षष्ठ्यन्त 'उडुलोमन् ङस् अपत्यम्' इस अलौकिक विग्रह में प्रकृत सूत्र से इञ्, प्रातिपदिक संज्ञा, विभक्ति लोप, तद्धितेषु अचाम् आदेः सूत्र से आदिवृद्धि होने पर 'औडुलोमन् इ' इस स्थिति में 'नस्तद्धिते' सूत्र से भसंज्ञक टि (अन्) का लोप एवं विभक्ति कार्य होकर प्रथमा विभक्ति एकवचन में औडुलोमिः रूप सिद्ध होता है।

(अ प्रत्यय विधि वार्तिक)

वार्तिक – लोम्नोऽपत्येषु बहुष्वकारो वक्तव्यः। उडुलोमाः। आकृतिगणोऽयम्।

अर्थ – लोमन् से अपत्य अर्थ के बहुत्व में 'अ' प्रत्यय हो।

उडुलोमाः – उडुलोम्नोऽपत्यानि – इस विग्रह में 'उडुलोमन् ङस् अपत्यानि' इस अलौकिक विग्रह में 'उडुलोमन्' से बहुत अपत्य अर्थ में 'लोम्नोऽपत्येषु' – इस वार्तिक से अ प्रत्यय होने पर प्रातिपदिक संज्ञा और विभक्ति का लोप होकर 'उडुलोमन् अ' इस स्थिति में 'नस्तद्धिते' सूत्र से भसंज्ञक टि (अन्) का लोप होकर उडुलोम से प्रथमा विभक्ति के बहुवचन में जस् प्रत्यय, पूर्व सवर्ण दीर्घ, 'स्' को रुत्व और विसर्ग होकर यह रूप सिद्ध होता है।

(अञ् प्रत्यय का विधि सूत्र)

सूत्र – अनृषि आनन्तर्ये विदादिभ्योऽञ् 4/1/104

वृत्तिः – ये तु अनृषयः, तेभ्योऽपत्ये, अन्यत्र तु गोत्रे। विदस्य गोत्रम्– वैदः, वैदौ, विदाः। पुत्रस्यापत्यं पौत्रः, पौत्रौ, पौत्राः। एवं दौहित्रादयः।

सूत्र पद विवरण – अनृषि पंचम्यन्त है किन्तु पंचमी विभक्ति का लोप हो गया है, आनन्तर्ये सप्तम्यन्त, विदादिभ्यः पंचमी बहुवचनान्त, अञ् प्रथमान्त कुल चार पद हैं।

सूत्रार्थ – विदादि–गण में 57 शब्द हैं। उनमें जो ऋषि वाचक (व्यक्तिवाचक) नहीं, अपितु जातिवाचक हैं, उनसे अपत्य अर्थ में तथा जो ऋषि वाचक हैं, उनसे गोत्रापत्य अर्थ में अञ् प्रत्यय हो।

विदादि गण – विद, उर्व, कश्यप, कुशिक, भरद्वाज, उपमन्यु, किलात, कन्दर्प, किंदर्भ, विश्वानर, ऋषिषेण, ऋष्टिषेण, ऋतभाग, हर्यश्व, प्रियक, आपस्तम्ब, कूचवार, शरद्वत्, शुनक, शुनक्, धेनु, गोपवन, शिग्रु, बिन्दु, भोगक, भाजन, शमिक, अश्वावतान, श्यामाक, श्यामक, श्यावलि, श्यापर्ण, हरित, किंदास, बह्यस्क, अर्कजूष, अर्कलूष, बध्योग, विष्णुवृद्ध, प्रतिबोध, रचित, रथीतर, रथन्तर, गविष्ठिर, निषाद, शबर, अलस, मठर, मृडाकु, सृपाकु, मृदु, पुनर्भू, पुत्र, दुहितृ, ननान्दृ, परस्त्री, परशु च। ये विदादि गण के शब्द हैं, इनके आरंभ में विद् शब्द है, अतः विदादि कहे गये हैं।

वैदः – विदस्य गोत्रापत्यम् – इस विग्रह में षष्ठ्यन्त 'विद् ङस् गोत्रापत्यम्' इस अलौकिक विग्रह में विद् से 'अनृष्यानन्तर्ये' इत्यादि सूत्र से, अञ्, प्रातिपदिक संज्ञा और विभक्ति लोप होकर 'विद अ' इस स्थिति में आदिवृद्धि और यस्येति लोप होकर प्रथमा एकवचन में वैदः तथा द्विवचन में 'औ' विभक्ति होने पर 'वृद्धिरेचि' सूत्र से वृद्धि होकर वैदौ रूप सिद्ध होते हैं।

विदाः – विदस्य गोत्रापत्यानि पुमांसः – इस विग्रह में विद से विहित अञ् का 'यञञोश्च' सूत्र से बहुत्व विवक्षा में लोप होने पर 'विद' से प्रथमा बहुवचन में जस् विभक्ति अनुबन्ध लोप 'प्रथमयो' पूर्व सवर्ण' सूत्र से पूर्व सवर्ण दीर्घ 'स्' को रुत्व और विसर्ग होकर यह रूप सिद्ध होता है।

पौत्रः – पुत्रस्यापत्यम् पुमान् – इस विग्रह में जातिवाची होने से पुत्र से अनन्तरापत्य में प्रकृत सूत्र से अञ् प्रत्यय होने पर 'तद्धितेषु अचाम् आदेः' सूत्र से आदिवृद्धि और 'यस्येति च' सूत्र से अन्त्य अकार का लोप होकर प्रथमा एकवचन में पौत्रः और द्विवचन में पौत्रौ रूप सिद्ध होते हैं।

पौत्राः – पौत्र शब्द के बहुवचन का रूप है। यहाँ 'पुत्रस्य अपत्यानि पुमांसः' इस विग्रह में 'अनृष्यानन्तर्ये विदादिभ्योऽञ्' सूत्र से अञ् प्रत्यय गोत्र अर्थ में नहीं है, अतः 'यञञोश्च' सूत्र से उसका लोप नहीं होता है। 'पुत्र अ' इस स्थिति में आदिवृद्धि और अन्त्य लोप होकर प्रथमा बहुवचन में जस् विभक्ति, अनुबन्ध लोप, पूर्व सवर्ण दीर्घ, 'स्' को रुत्व और विसर्ग होकर पौत्राः रूप सिद्ध होता है।

दौहित्रः – दुहितुरपत्यम् – इस विग्रह में दुहितृ से 'अनृष्यानन्तर्ये' इत्यादि सूत्र से अञ्, आदिवृद्धि 'दौहितृ अ' इस स्थिति में 'इको यणचि' सूत्र से यण् होकर प्रथमा एक वचन में दौहित्रः, तथा 'ननान्दृ अ' में आदिवृद्धि 'नानान्दृ अ' में 'इको यणचि' सूत्र से ऋ को यण् 'र' होकर प्रथमा एक वचन में नानान्द्रः इत्यादि रूप सिद्ध होते हैं।

(अण् प्रत्यय विधि सूत्र)

सूत्र – शिवादिभ्योऽण् 4/1/112

वृत्तिः – अपत्ये। शैवः। गाङ्गः।

सूत्र पद विवरण – शिवादिभ्यः पंचमी बहुवचनान्त, अण् प्रथमान्त कुल दो पद हैं।

सूत्रार्थ – शिवादि गण के शब्दों से अपत्य अर्थ में अण् प्रत्यय हो। इसमें शिव आदि 88 शब्द और नदीवाची शब्द भी हैं।

शिवादि गण – शिव, प्रोष्ठ, प्रोष्ठिक, चण्ड, जम्भ, भूरि, दण्ड, कुठार, ककुभ्, ककुभा, अनभिम्लान, कोहित, सुख, सन्धि, मुनि, ककुत्स्थ, कहोड, कोहड, कहूय, कहय, रोद, कपिञ्जल, कुपिञ्जल, खञ्जन, वतण्ड, तृणकर्ण, क्षीरह्रद, जलह्रद, परिल, पथिक, पिष्ट, हैहय, पार्षिका, गोपिका, कपिलिका, जटिलिका, वधिरिका, मञ्जीरक, मजिरक, वृष्णिक, खञ्जास, खञ्जाद, खञ्जार, खञ्जाल, कर्मार, रेख, लेख, आलेखन, विश्रवण, रवण, वर्तनाक्ष, ग्रीवाक्ष, पिटक, विटप, पिटाक, तृक्षाक, नभक, ऊर्णनाभ, जरत्कारु, पृथा, उत्क्षेप, पुरोहितिका, सुरोहितिका, सुरोहिका, आर्यश्वेत, अर्यश्वेत, सुपिष्ट, मसुरकर्ण, मयूरकर्ण, खर्जूरकर्ण, कदूरक, तक्षन्, ऋष्टिषेण, गङ्गा, विपाश, कस्क, लह्य, द्रुह्य, अयस्थूण, तृणकर्ण, तृण, कर्ण, पर्ण, भलन्दन, विरूपाक्ष, भूमि, इला, सपत्नी। द्व्यचो नद्याः (नदी वाली दो अच् वाले शब्द, जैसे रेवा इत्यादि)। त्रिवेणी त्रिवणं च। यह शिवादि गण आकृति गण है, अर्थात् जो शब्द यहाँ पठित नहीं हैं, किन्तु उनमें यह अण् प्रत्यय होता हो तो उन्हें भी शिवादि गण का ही शब्द समझना चाहिए।

शैवः – शिवस्यापत्यम्– इस विग्रह में षष्ठ्यन्त 'शिव ङस् अपत्यम्' इस अलौकिक विग्रह में

शिव से 'शिवादिभ्योऽण्' सूत्र से अण् होने पर 'कृत्तद्धित समासाश्च' सूत्र से प्रातिपदिक संज्ञा 'सुपो धातुप्रातिपदिकयोः' इस सूत्र से विभक्ति का लोप होने पर 'शिव अ' इस स्थिति में 'तद्धितेषु अचाम् आदेः' इस सूत्र से आदिवृद्धि यस्येति लोप होकर प्रथमा एकवचन में सु विभक्ति, रुत्व और विसर्ग होकर शैवः रूप सिद्ध होगा।

गाङ्गः – गङ्गाया अपत्यम् पुमान् – इस विग्रह में गङ्गा से 'शिवादिभ्योऽण्', सूत्र से अण् प्रत्यय अनुबन्ध लोप 'तद्धितेषु अचाम् आदेः' इस सूत्र से आदिवृद्धि और भ संज्ञक अन्त्य आकार का यस्येति लोप होकर 'गाङ्ग' प्रातिपदिक से प्रथमा एकवचन में सु विभक्ति और रुत्व – विसर्ग कार्य होकर यह रूप सिद्ध होता है।

(अण् प्रत्यय का विधि सूत्र)

सूत्र – ऋष्यन्धक–वृष्णि–कुरुभ्यश्च 4/1/114

वृत्तिः – ऋषिभ्यः – वासिष्ठः, वैश्वामित्रः। अन्धकेभ्यः– श्वाफल्कः। वृष्णिभ्यः – वासुदेवः। कुरुभ्यः – नाकुलः, साहदेवः।

सूत्र पद विवरण – ऋष्यन्धकवृष्णिकुरुभ्यः पंचमी बहु वचनान्त, च 'अण्' प्रत्यय संग्राहक अव्यय कुल दो पद हैं।

सूत्रार्थ – प्रसिद्ध ऋषिवाची तथा अन्धक, वृष्णि और कुरुवंशी व्यक्तिवाची शब्दों से अपत्यार्थ में अण् प्रत्यय हो। उदाहरण है– ऋषि वाची से वासिष्ठः, वैश्वामित्रः य अन्धक यदुवंशी वाची से श्वाफल्कःय वृष्णि वंशी वाची से वासुदेवःय कुरु वंशी वाची से नाकुलः और साहदेवः।

वासिष्ठः वैश्वामित्रः – वसिष्ठस्यापत्यम् – इस विग्रह में वसिष्ठ से तथा 'विश्वामित्रस्यापत्यम्' इस विग्रह में विश्वामित्र से ऋषिवाची होने के कारण 'ऋष्यन्धक' इत्यादि सूत्र से अण्, अनुबन्ध लोप 'तद्धितेषु अचाम् आदेः' सूत्र से आदिवृद्धि, 'यस्येति च' सूत्र से भसंज्ञक अन्त्यलोप होकर प्रथमा विभक्ति एक वचन में ये रूप निष्पन्न होते हैं।

श्वाफल्कः – श्वफल्कस्यापत्यम् – इस विग्रह में अन्धक (यादव कुल) व्यक्तिवाची श्वफल्क से अपत्य अर्थ में 'ऋष्यन्धक' इत्यादि सूत्र से अण् अनुबन्ध लोप 'तद्धितेष्वचामादेः' सूत्र से आदिवृद्धि 'यस्येति च' सूत्र से भसंज्ञक अन्त्यलोप होकर प्रथमा विभक्ति एक वचन में यह रूप सिद्ध होता है।

वसुदेवः – वसुदेवस्यापत्यम् – इस विग्रह में वृष्णि (यादव कुल) व्यक्तिवाची वसुदेव से अपत्य अर्थ में 'ऋष्यन्धकवृष्णिकुरुभ्यश्च' सूत्र से अण्, अनुबन्ध लोप, आदिवृद्धि, भसंज्ञक अन्त्यलोप एवं अन्य कार्य होकर प्रथमा विभक्ति एकवचन में रूप सिद्ध होगा।

नकुलः साहदेवः – नकुलस्यापत्यम् तथा सहदेवस्यापत्यम् इस विग्रह में कुरु वंशी व्यक्तिवाची नकुल और सहदेव से 'ऋष्यन्धकवृष्णिकुरुभ्यश्च' सूत्र से अण् प्रत्यय, आदिवृद्धि, अन्त्यलोप एवं प्रथमा एक वचन के विभक्ति कार्य होते हैं।

(अण् प्रत्यय और 'उत्' आदेश का विधि सूत्र)

सूत्र – मातुरुत् संख्या–सं–भद्र–पूर्वायाः 4/1/115

वृत्तिः– संख्यादिपूर्वस्य मातृशब्दस्य 'उद्' आदेशः स्यात्, अण् प्रत्ययश्च। द्वैमातुरः। षाण्मातुरः। सांमातुरः। भाद्रमातुरः।

सूत्र पद विवरण – मातुः षष्ठी एकवचनान्त, उत् प्रथमान्त, संख्यासंभद्रपूर्वायाः षष्ठी एकवचनान्त 'मातुः' का विशेषण है। 'उ' में तपर करण है, अतः 'उत्' ह्रस्व उकार का बोधक है।

सूत्रार्थ – संख्या, सम् और भद्र पूर्व में रहने पर मातृ को –उत्' (ह्रस्व उ) आदेश तथा अण् प्रत्यय हो अपत्य अर्थ में। 'अलोऽन्त्यस्य' इस परिभाषा सूत्र के अनुसार यह ह्रस्व 'उ' मातृ के अन्तिम अल् ऋ के स्थान पर 'उरण् रपरः' सूत्र से रपर होकर 'उर आदेश के रूप में परिवर्तित होता है।

द्वैमातुरः – द्वयोः मात्रोरपत्यं पुमान् – इस विग्रह में तथा 'द्विमातृ ओस् अपत्यम्' इस अलौकिक विग्रह में द्विमातृ से अपत्य अर्थ में 'मातुरुत्' इत्यादि सूत्र से अण् प्रत्यय और ऋ को 'उरण् रपरः' सूत्र के अनुसार रपर के साथ 'उर' आदेश होकर 'द्विमार्तुओस् अ' स्थिति में प्रातिपदिक संज्ञा, विभक्ति लोप होने पर 'द्विमार्तुअश स्थिति में 'तद्धितेषु अचाम् आदेः' सूत्र से आदिवृद्धि और प्रथमा एक वचन में विभक्ति कार्य होकर यह रूप सिद्ध होता है।

षाण्मातुरः – षण्णां–मातृणामपत्यम्, सांमातुरः – संमातुरपत्यम्, भाद्रमातुरः – भद्रमातुरपत्यम् इत्यादि विग्रहों में षण्मातृ, संमातृ और भद्रमातृ से अपत्य अर्थ में 'मातुरुत्संख्यासंभद्रपूर्वायाः' सूत्र से अण्, उर आदेश, आदिवृद्धि और विभक्तिकार्य होकर प्रथमा एकवचन में ये रूप निष्पन्न होते हैं।

27.3 सारांश

इस इकाई में अपत्य (सन्तान) अर्थ का अधिकार है। अतः इस इकाई के सारे प्रत्यय अपत्य अर्थ में ही विहित होते हैं। अपत्य के तीन भेद हैं– 1. अनन्तरापत्य, 2. गोत्रापत्य और 3. युवापत्य। पिता से अनन्तर = अव्यहित सन्तान पुत्र/पुत्री को अनन्तरापत्य अथवा अपत्य कहते हैं। पुत्र से आगे की सभी पीढ़ी पौत्र, प्रपौत्र आदि को अपना गोत्रापत्य तथा पौत्र से आगे की सभी पीढ़ी प्रपौत्र आदि को तब युवापत्य कहते हैं, जब उसके पिता या पितामह आदि कोई अभिभावक जीवित हो। अनन्तरापत्य या गोत्रापत्य में एक ही प्रत्यय होता है, जो पुत्र, पौत्र आदि सभी पीढ़ियों के पुत्र का प्रसंगानुसार बोधक होता है, जबकि युवापत्य में एक

प्रत्यय गोत्रापत्य का और एक प्रत्यय युवापत्य का, कुल दो प्रत्यय होते हैं, भले ही वह किसी भी पीढ़ी का पुत्र हो।

अपत्य अर्थ का सामान्य प्रत्यय अण् है, जो 'तस्यापत्यम्' सूत्र से विहित होता है। शेष सूत्रों से विहित होने वाले प्रत्यय इस अण् प्रत्यय के बाधक हैं। बाधक सूत्र और प्रत्ययो का भी उल्लेख किया गया है। नञ् और स्नञ् प्रत्ययों के अपत्य के अतिरिक्त भाव–कर्म, समूह आदि अनेक अर्थ हैं। शेष सभी प्रत्यय अपत्यार्थक हैं। ह्रस्व अकारान्त शब्द से विधीयमान इञ् भी सामान्य प्रत्यय है, जिसका बाह्वादि इञ् आदि अन्य प्रत्यय बाधक हैं। इन विधि सूत्रों से नञ्, स्नञ्, अण्, यञ्, इञ्, फक्, अञ् प्रत्यय तथा वार्तिक से 'अ' प्रत्यय का विधान होता है। ये सभी प्रत्यय अजादि और यकारादि हैं, अतः ये प्रत्यय जिस शब्द से होते हैं, उस शब्द की 'यचि भम्' सूत्र से भ संज्ञा होती है और उस शब्द के अन्तिम 'उ' से भिन्न अच् का 'यस्येति च' सूत्र से लोप हो जाता है' किन्तु 'उ' को गुण 'ओ' और उसको अवादेश होता है। यदि शब्द के अन्त में 'अन्' हो तो 'नस्तद्धिते' सूत्र से टि लोप होता है, किन्तु 'राजन्' के अन् का लोप नहीं होता है। इसी प्रकार वार्तिक के 'अ' प्रत्यय को छोड़कर शेष सभी प्रत्यय णित्, ञित् और कित् हैं, अतः प्रत्यय का विधान होने पर शब्द के आदि अच् को 'तद्धितेषु अचाम् आदेः' अथवा 'किति च' सूत्र से आदिवृद्धि होती है।

इसी प्रकार उक्त सभी अपत्यार्थक प्रत्यय षष्ठ्यन्त पद से होते हैं। प्रत्यय का विधान होने पर अलौकिक विग्रह के षष्ठ्यन्त पद और प्रत्यय समुदाय की 'कृत्तद्धित समासाश्च' सूत्र से प्रातिपदिक संज्ञा और 'सुपो धातु प्रातिपदिकयोः' सूत्र से विभक्ति का लोप होता है। प्रत्यय का संयोग होने के बाद तद्धितान्त प्रातिपदिक रूप निष्पन्न होता है। तदनन्तर अभीष्ट प्रथमा आदि विभक्ति प्रत्ययों का योग होने पर तद्धितान्त पद सिद्ध होते हैं।

उपर्युक्त दोनों प्रघट्टकों में निर्दिष्ट कार्यों के विधायक सूत्र इस पाठ में नहीं हैं, किन्तु रूप सिद्धि में उनकी महती भूमिका है। वे सामान्य विधि सूत्र हैं। सभी पाठों की रूप सिद्धि में उनसे विहित कार्य होते हैं। अतः रूप सिद्धि करते समय उन सूत्रों को सदा ध्यान में रखना चाहिए।

27.4 शब्दावली

शब्द (पुंलिंग)	अर्थ	स्त्रीलिंग रूप	अर्थ
आश्वपतः	अश्वपति का पुत्र	आश्वपती	अश्वपति की पुत्री
गाणपतः	गणपति का पुत्र	गाणपती	गणपति की पुत्री
दैत्यः	दिति का पुत्र (राक्षस)	दैत्या	दिति की पुत्री
आदित्यः	अदिति का पुत्र (सूर्य)	आदित्या	अदिति की पुत्री

आदित्यः	आदित्य का पुत्र	आदित्या	आदित्य की पुत्री
औत्सः	उत्स का पुत्र	औत्सी	उत्स की पुत्री
स्त्रैणः	स्त्री का पुत्र, समूह आदि	स्त्रैणी	स्त्री की पुत्री आदि
पौंस्नः	पुरुष का पुत्र, समूह आदि	पौंस्नी	पुरुष की पुत्री आदि
औपगवः	उपगु का पुत्र	औपगवी	उपगु की पुत्री
गार्ग्यः	गर्ग गोत्रीय पुत्र	गार्गी	गर्ग गोत्रीय पुत्री
वात्स्यः	वत्स गोत्रीय पुत्र	वात्सी	वत्स गोत्रीय पुत्री
गार्ग्यायणः	गर्ग गोत्रीय युवक	गार्ग्यायणी	गर्ग गोत्रीय युवती
दाक्षायणः	दक्ष गोत्रीय युवक	दाक्षायणी	दक्ष गोत्रीय युवती
दाक्षिः	दक्ष का पुत्र	दाक्षी	दक्ष की पुत्री
बाहविः	बाहु का पुत्र	बाहवी	बाहु की पुत्री
औडुलोमिः	उडुलोमा का पुत्र	औडुलोमी	उडुलोमा की पुत्री
वैदः	विद गोत्रीय पुत्र	वैदी	विद गोत्रीय पुत्री
वैदौ	विद गोत्र के दो पुत्र	वैद्यौ	विद गोत्र की दो पुत्रियाँ
विदाः	विदगोत्र के अनेक पुत्र	वैद्यः	विद गोत्र की अनेक पुत्रियाँ
पौत्रः	पुत्र का पुत्र पोता	पौत्री	पुत्र की पुत्री पोती
पौत्रौ	पुत्र के दो पुत्र (पोते)	पौर्त्यौ	पुत्र की दो पुत्रियाँ (पोतियाँ)
पौत्रौ	पुत्र के अनेक पुत्र (पोते)	पौर्त्यः	पुत्र की अनेक पुत्रियाँ (पोतियाँ)
दौहित्रः	पुत्री का पुत्र (नाती)	दौहित्री	पुत्री की पुत्री (नातिन)
नानान्द्रः	ननद का पुत्र	नानान्द्री	ननद की पुत्री
शैवः	शिव का पुत्र	शैवी	शिव की पुत्री
गाङ्गः	गंगा का पुत्र	गाङ्गी	गंगा की पुत्री
वासिष्ठः	वसिष्ठ गोत्र का पुत्र	वासिष्ठी	वसिष्ठ गोत्र की पुत्री
वैश्वामित्रः	विश्वामित्र गोत्र का पुत्र	वैश्वामित्री	विश्वामित्र गोत्र की पुत्री

श्वाफल्कः	श्वफल्क का पुत्र	श्वाफल्की	श्वफल्क की पुत्री
वासुदेवः	वसुदेव का पुत्र	वासुदेवी	वसुदेव की पुत्री
नाकुलः	नकुल का पुत्र	नाकुली	नकुल की पुत्री
साहदेव	सहदेव का पुत्र	साहदेवी	सहदेव की पुत्री
द्वैमातुरः	दो माताओं के पुत्र (गणेश)	द्वैमातुरी	दो माताओं की पुत्री
षाण्मातुरः	छः माताओं के पुत्र (कार्तिकेय)	षाण्मातुरी	छः माताओं की पुत्री
सांमातुरः	सती का पुत्र	सांमातुरी	सती की पुत्री
भाद्रमातुरः	भद्र माता का पुत्र	भाद्रमातुरी	भद्र माता की पुत्री

विशेष– 'गर्गादिभ्यो यञ्' सूत्र से गर्गादि गण के शब्दों से अपत्य अर्थ के बहुत्व में जो यञ् प्रत्यय होता है, उसका 'यञ्–अञोश्च' सूत्र से लुक् हो जाता है। अतः यञन्त और अञन्त अपत्यार्थक तद्धित शब्दों का बहुवचन में भिन्न रूप होता है। इसी तरह लोमन् शब्दान्त उडुलोमन् आदि शब्दों से भी अपत्यार्थ बहुवचन में 'अ' प्रत्यय होने के कारण भिन्न रूप होते हैं। उदाहरण के लिए यहाँ कुछ शब्दों के रूप प्रस्तुत किये जा रहे हैं –

गार्ग्य (गर्ग गोत्र का पुत्र) पुंलिङ्ग

विभक्ति	**एकवचन**	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथमा –	गार्ग्यः	गार्ग्यौ	गर्गाः
द्वितीया –	गार्ग्यम्	गार्ग्यौ	गर्गान्
तृतीया –	गार्ग्येण	गार्ग्याभ्याम्	गर्गैः
चतुर्थी –	गार्ग्याय	गार्ग्याभ्याम्	गर्गेभ्यः
पंचमी –	गार्ग्यात्–द्	गार्ग्याभ्याम्	गर्गेभ्यः
षष्ठी –	गार्ग्यस्य	गार्ग्ययोः	गर्गाणाम्
सप्तमी –	गार्ग्ये	गार्ग्ययोः	गर्गेषु
संबोधन –	हे गार्ग्य	हे गार्ग्यौ	हे गर्गाः

इसी तरह की प्रक्रिया से वात्स्य, शाण्डिल्य, औलूक्य आदि यञन्त तद्धित पदों के पुंलिंग में रूप निर्मित होंगे।

वैद (विद गोत्र का पुत्र) पुंलिंग

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहु वचन
प्रथमा –	वैदः	वैदौ	विदाः
द्वितीया –	वैदम्	वैदौ	विदान्
तृतीया –	वैदेन	वैदाभ्याम्	विदैः
चतुर्थी –	वैदाय	वैदाभ्याम्	विदेभ्यः
पंचमी –	वैदात्–द्	वैदाभ्याम्	विदेभ्यः
षष्ठी –	वैदस्य	वैदयोः	विदानाम्
सप्तमी –	वैदे	वैदयोः	विदेषु
संबोधन –	हे वैद	हे वैदौ	हे विदाः

इसी प्रकार औत्स, और्व, काश्यप, कौशिक, भारद्वाज आदि अञन्त तद्धित शब्दों के रूप सिद्ध होंगे।

औडुलोमि (उडुलोमा का पुत्र) पुंलिंग

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहु वचन
प्रथमा –	औडुलोमिः	औडुलोमी	उडुलोमाः
द्वितीया –	औडुलोमिम्	औडुलोमी	उडुलोमान्
तृतीया –	औडुलोमिना	औडुलोमिभ्याम्	उडुलोमैः
चतुर्थी –	औडुलोमये	औडुलोमिभ्याम्	उडुलोमेभ्यः
पंचमी –	औडुलोमेः	औडुलोमिभ्याम्	उडुलोमेभ्यः
षष्ठी –	औडुलोमेः	औडुलोम्योः	उडुलोमानाम्
सप्तमी –	औडुलोमौ	औडुलोम्योः	उडुलोमेषु
संबोधन –	हे औडुलोमे	हे औडुलोमी	हे उडुलोमाः

इसी प्रकार कार्णलोमि, बाहुलोमि आदि लोमान्त तद्धित शब्दों के रूप होंगे।

27.5 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. लघुसिद्धान्तकौमुदी (हिन्दी–संस्कृत आदि व्याख्याओं सहित विभिन्न संस्करण में उपलब्ध हैं)
2. संस्कृत के प्रत्ययों का भाषाशास्त्रीय पर्यालोचन, आजाद मिश्र,
3. वैयाकरणसिद्धान्तरत्नाकरः भाग–1, आजाद मिश्र,
4. तद्धितान्ताः केचन शब्दाः – डॉ भगीरथ प्रसाद त्रिपाठी 'वागीश' शास्त्री,
5. अष्टाध्यायी सूत्रपाठः – पुष्पा दीक्षित, ज्ञानभारती पब्लिकेशन्स 25/73, शक्तिनगर, दिल्ली–110007

27.6 अभ्यास प्रश्न

1. अनुबन्ध लोप किस सूत्र से होता है?
2. ञित्, णित् और कित् तद्धित प्रत्यय होने पर आदिवृद्धि किस सूत्र से होती है?
3. षष्ठ्यन्त पद से अपत्यार्थक प्रत्यय होने पर षष्ठी विभक्ति का लोप किस सूत्र से होता है?
4. तद्धित प्रत्यय पर में होने पर किस सूत्र से प्रातिपदिक के अन्तिम वर्ण का लोप होता है? उस सूत्र का अर्थ लिखें।
5. विग्रह किसे कहते हैं ? उसके अलौकिक भेद का प्रयोजन बतावें।
6. अनन्तरापत्य, गोत्र और युवापत्य किसे कहते हैं?
7. 'ॠ' के स्थान पर विधीयमान अच् को रपर किस सूत्र से होता है?
8. गार्ग्यः पद की रूपसिद्धि की प्रक्रिया रूष्ट कीजिए।

इकाई 28 तद्धित प्रकरण – अपत्यार्थक प्रत्यय भाग–2

इकाई की रूपरेखा

28.0 उद्देश्य

28.1 प्रस्तावना

28.2 अपत्यार्थक प्रत्यय भाग–2 (सूत्र – स्त्रीभ्यो ढक् से कम्बोजाल्लुक् तक – सूत्र, वृत्ति, सूत्रार्थ एवं रूपसिद्धि)

28.3 इकाई में प्रत्यय विधायक सूत्र

28.4 सारांश

28.5 शब्दावली

28.6 कुछ उपयोगी पुस्तकें

28.7 अभ्यास प्रश्न

28.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरांत शिक्षार्थी –

- अपत्यार्थ में विशेष पदों से ढक्, यत्, घ, ण्य, ञ्यण् एवं ढक् प्रत्यय होते हैं, यह जान सकेगे।
- इस पाठ में इन प्रत्ययों के योग से निष्पन्न तद्धितान्त शब्द रूपों का परिचय प्राप्त करेंगे; तथा
- इन प्रत्ययों का परिचय प्राप्त कर लेने पर शिक्षार्थी इनके प्रयोग से विभिन्न संदर्भों में निर्मित होने वाले शब्दों की निर्माण प्रक्रिया को समझ सकेंगे।

28.1 प्रस्तावना

अपत्यार्थ में अण् प्रत्यय का अधिकार है, अर्थात् जिस सूत्र में प्रत्यय का उल्लेख अथवा अनुवृत्ति नहीं है, उससे तथा जिस प्रातिपदिक प्रकृति से कोई प्रत्यय प्राप्त नहीं है उससे आधिकारिक सामान्य प्रत्यय अण् होता है। इसी तरह अपत्यार्थ में दूसरा सामान्य प्रत्यय इञ् है जो सभी ह्रस्व अकारान्त प्रकृतियों से प्राप्त रहता है। इन दोनों सामान्य प्रत्ययों के क्रमशः सूत्र हैं – तस्यापत्यम् और अत इञ्। अपत्यार्थ प्रकरण के शेष सभी सूत्र विशेष, यानी उक्त दोनों सूत्रों के बाधक हैं। इकाई 27 के पाठ में सामान्य और कुछ विशेष प्रत्ययों का अध्ययन हुआ। अब इस पाठ में शेष बाधक प्रत्यय और तद्राज संज्ञक प्रत्ययों से संबन्धित सूत्रों और वार्तिकों का अध्ययन आप करेंगे।

28.2 अपत्यार्थक प्रत्यय भाग–2 : विधि सूत्र अर्थ एवं व्याख्या (स्त्रीभ्यो ढक् से कम्बोजाल्लुक् सूत्र तक)

अब शिक्षार्थी अपत्यार्थक में घटित तथा प्रत्यय भाग–2 में वर्णित सूत्रों एवं उनकी वृत्ति–विवरणादि का अध्ययन करेंगे। इसके साथ ही अभ्यास के लिए उनकी रूपसिद्धि भी बताई जाएगी और संबद्ध सूत्रों का भी परिचय दिया जाएगा।

(ढक् प्रत्यय विधायक विधि सूत्र)

सूत्र – स्त्रीभ्यो ढक् 4/1/120

वृत्तिः – स्त्रीप्रत्ययान्तेभ्यो ढक्। वैनतेयः।

सूत्र पद विवरण – स्त्रीभ्यः, पंचम्यन्त और ढक् प्रथमान्त पद है। 'षष्ठ्यन्त', 'समर्थ' और 'वा' इन तीन पदों का सभी सूत्रों में अधिकार है। सूत्रार्थ इस प्रकार है – जिन पदों में स्त्रीप्रत्यय जुड़ा हो उनसे ढक् प्रत्यय हो। यह प्रत्यय अपत्य अर्थ में षष्ठ्यन्त समर्थ पदों से विकल्प से घटित होगा।

व्याख्या – अपत्य अर्थ में विकल्प से घटित होने वाले प्रत्यय के एकाधिक प्रकार है! प्रातिपदिक शब्द पुंलिंग और स्त्रीलिंग भेद से दो प्रकार के होते हैं। उनमें स्त्री के वाचक शब्दों में टाप् (आ) या ङीप् (ई) प्रत्यय जुड़े रहते हैं। जैसे– विनता, दत्ता, राधा, उर्मिला, गौरी, पार्वती, जानकी आदि। ये शब्द स्त्री प्रत्ययान्त प्रातिपदिक कहलाते हैं। इस प्रकार प्रातिपदिक के दो प्रकार हैं – स्त्री प्रत्यय से रहित और उससे सहित। पिछली इकाई में स्त्री प्रत्यय से रहित प्रातिपदिक प्रकृति से अपत्यार्थक प्रत्ययों के विधान का अध्ययन हुआ। अब इस पाठ में स्त्री प्रत्ययान्त प्रातिपदिक प्रकृति से 'स्त्रीभ्यो ढक्' सूत्र अपत्य अर्थ में ढक् प्रत्यय का विधान करता है। यह प्रत्यय भी कृत–सन्धि समर्थ षष्ठ्यन्त पदों से ही होता है।

वैनतेयः – विनतायाः अपत्यं पुमान्– लौकिक विग्रह तथा 'विनता ङस् अपत्य सु' इस अलौकिक विग्रह में 'विनता' शब्द स्त्री प्रत्ययान्त है, अतः 'स्त्रीभ्यो ढक्' सूत्र से ढक्, प्रत्यय के इत्संज्ञक अनुबन्ध 'क्' का लोप, प्रातिपदिक संज्ञा, विभक्ति लोप होकर 'विनता ढ्' इस स्थिति में 'आयनेयीनीयियः–' इत्यादि सूत्र से 'ढ्' को 'एय्' आदेश, प्रत्यय कित् होने से 'किति च' सूत्र से आदिवृद्धि होने पर 'वैनता एय् अ' इस स्थिति में 'यस्येति च' सूत्र से भ संज्ञक अन्त्य 'आ' का लोप होकर 'वैनत् एय् अ' में वर्ण सम्मेलन के बाद 'वैनतेय' प्रातिपदिक से प्रथमा एकवचन में वैनतेयः (विनता का पुत्र गरुड) रूपसिद्ध होता है। इस प्रकार आप ठक् प्रत्यय के प्रयोग से सिद्ध होने वाले वैनतेय शब्द में विभिन्न सूत्रों का क्रम भी जान गए हैं।

('यत्' प्रत्यय विधि सूत्र)

सूत्र – राजश्वशुराद् यत् 4/11/137

सूत्र पद विवरण – राजश्वशुरात् पंचम्यन्त और यत् प्रथमान्त हैं।

सूत्रार्थ – राजन् और श्वशुर से अपत्यार्थ में यत् हो। प्रत्यय में 'त्' इत्संज्ञक अनुबन्ध है।

(जाति नियम वार्तिक)

वार्तिक – राज्ञो जातावेव इति वाच्यम्।

वार्तिकार्थ – राजन् से क्षत्रिय जाति अर्थ में ही यत् प्रत्यय हो।

(प्रकृतिभाव विधि सूत्र)

सूत्र –ये चाभावकर्मणोः 6/4/168

वृत्तिः – यादौ तद्धिते परेऽन् प्रकृत्या स्यात्, न तु भावकर्मणोः। राजन्यः। श्वशुर्यः। जातावेव इति किम्?

सूत्र पद विवरण – ये सप्तम्यन्त, च अव्यय प्रकृतिभाव का समुच्चायक, अ–भाव–कर्मणोः सप्तमी द्विवचनान्त तीन पद हैं।

सूत्रार्थ – यकारादि तद्धित प्रत्यय पर में होने पर प्रातिपदिकान्त 'अन्' को प्रकृति भाव हो, किन्तु भाव और कर्म अर्थ में प्रकृतिभाव न हो। प्रकृतिभाव होने से 'अन्' का टिलोप नहीं होगा।

राजन्यः – राज्ञः अपत्यं जातिः इस विग्रह में तथा 'राजन् ङस् अपत्यं जातिः' इस अलौकिक विग्रह में षष्ठ्यन्त राजन् से 'राज्ञो जातावेवेति–' इस वार्तिक के अनुसार क्षत्रिय जाति का अपत्य अर्थ में 'राजश्वशुरात्–' इत्यादि सूत्र से यत् प्रत्यय, अनुबन्ध लोप प्रातिपदिक संज्ञा विभक्ति लोप होने पर 'राजन् य' इस स्थिति में 'यचि भम्' सूत्र से राजन् की भ संज्ञा होने से 'नस्तद्धिते' सूत्र से 'अन्' का लोप प्राप्त है, किन्तु 'ये चाभावकर्मणोः' सूत्र से प्रकृतिभाव होने से लोप नहीं होकर 'राजन्य' प्रातिपदिक से प्रथमा एकवचन में सु विभक्ति को रुत्व और विसर्ग होकर राजन्यः (राजा से उत्पन्न क्षत्रिय जाति का राजःपुत्र (राजपुत्र) रूप सिद्ध होता है।

श्वशुर्यः – श्वशुरस्यापत्यं पुमान्–, इस विग्रह में तथा 'श्वशुर ङस् अपत्या' इस अलौकिक विग्रह में षष्ठ्यन्त श्वशुर से 'राजश्वशुराद् यत्' सूत्र से यत् प्रत्यय, अनुबन्धलोप होकर तथा प्रातिपदिक संज्ञा और विभक्ति लोप होने पर 'श्वशुर य' इस स्थिति में भसंज्ञक रकारोत्तर अकार का 'यस्येति' लोप होकर प्रथमा एकवचन में 'श्वशुर्यः (श्वशुर का पुत्र साला) रूप सिद्ध होता है।

वृत्तिः – जातौ एव इति किम् ?

अर्थ – प्रश्न है कि 'राजन्' शब्द से विधीयमान यत् प्रत्यय क्षत्रिय जाति अर्थ में ही क्यों होता है? उत्तर है कि क्षत्रिय जाति के राजा से शूद्रा आदि भार्या में उत्पन्न अजाति अपत्य (सन्तान) अर्थ में यह यत् प्रत्यय नहीं होगा। किन्तु उस वर्णसंकर अपत्य अर्थ में 'तस्यापत्यम्' सूत्र से सामान्य अण् प्रत्यय होकर 'राजनः' रूप सिद्ध होता है।

(प्रकृतिभाव का विधायक विधिसूत्र)

सूत्र – अन् 6/4/167

वृत्तिः – अन् प्रकृत्या स्याद् अणि परे। राजनः।

सूत्र पद विवरण – अन् प्रथमान्त है, शेष पदों की पूर्व सूत्रों से अनुवृत्ति होती है।

सूत्रार्थ – अन् को प्रकृतिभाव हो अण् प्रत्यय परे रहते।

व्याख्या – जो प्रत्यय धातु से होते हैं, उन प्रत्ययों के परे रहते पूर्व में विद्यमान धातु स्वरूप को धातु प्रकृति कहते हैं तथा जो तद्धित या सुप् प्रत्यय प्रातिपदिक से होते हैं, उन प्रत्ययों के परे रहते पूर्व में विद्यमान शब्द स्वरूप को प्रातिपदिक प्रकृति कहते हैं। तद्धित प्रत्यय सुबन्त पद से विहित होने पर भी प्रत्यय विधान के पश्चात् सुपो धातु प्रातिपदिकयोः सूत्र से सुप् विभक्ति का लोप हो जाता है। प्रातिपदिक ही अवशेष रहता है। अतः तद्धित का अण् प्रत्यय पर में रहने पर उस प्रातिपदिक प्रकृति के अन्त का 'अन्' अपने स्वरूप में ही रहता है, अर्थात् 'नस्तद्धिते' सूत्र से उसका टिलोप नहीं होता है।

राजनः – राज्ञः अपत्यम् अजातिः पुमान्– (राजा से शूद्रा दासी आदि में उत्पन्न पुत्र, जो क्षत्रिय नहीं) इस विग्रह में तथा 'राजन् ङस् अजातिः अपत्यम्' इस अलौकिक विग्रह में 'तस्यापत्यम्' सूत्र से जाति भिन्न अपत्य अर्थ में अण् प्रत्यय अनुबन्ध लोप होने पर 'राजन् ङस् अ' समुदाय की 'कृत्तद्धित–समासाश्च' सूत्र से प्रातिपदिक संज्ञा तथा 'सुपो धातुप्रातिपदिकयोः' सूत्र से विभक्ति का लोप होने पर 'राजन् अ' स्थिति में तद्धित अजादि प्रत्यय 'अ' पर में रहने के कारण 'यचि भम्' सूत्र से 'राजन्' की भ संज्ञा होने पर 'नस्तद्धिते' सूत्र से भ संज्ञक प्रकृति के अन्त्य 'अन्' 'टि' का लोप प्राप्त है, किन्तु 'अन्' सूत्र से उसको प्रकृति भाव होने से लोप का निषेध होकर 'राजन' अकारान्त प्रातिपदिक से प्रथमा विभक्ति से एकवचन में सु विभक्ति और अनुबन्ध लोप होने पर 'स्' को रुत्व एवं विसर्ग होकर 'राजनः' रूप सिद्ध होता है।

('घ' प्रत्यय विधि सूत्र)

सूत्र – क्षत्राद् घः 4/1/118

वृत्तिः – क्षत्रियः। जातौ इत्येव। क्षात्रिः अन्यत्र।

सूत्र पद विवरण – क्षत्रात् पंचम्यन्त और घः प्रथमान्त दो पद हैं।

सूत्रार्थ – क्षत्र शब्द से जाति अर्थ में ही घः प्रत्यय हो।

क्षत्रियः – क्षत्रस्य जातिः – इस विग्रह में 'क्षत्र ङस् जातिः' इस अलौकिक विग्रह के 'क्षत्राद् घः' सूत्र से जाति अर्थ में घ प्रत्यय होने पर 'क्षत्र ङस् घ' समुदाय की 'कृत्तद्धित समासाश्च' सूत्र से प्रातिपदिक संज्ञा 'सुपो धातुप्रातिकयोः' सूत्र से विभक्ति का लोप होकर 'क्षत्र घ' स्थिति में 'आयनेयीनीयियः फढखछघां प्रत्यययादीनाम्' सूत्र से घ् को इय् आदेश होने पर 'क्षत्र इय् अ' स्थिति में 'यचि भम्' सूत्र से प्रकृति क्षत्र की भ संज्ञा होने पर अन्त्य अकार का 'यस्येति च' सूत्र से लोप होकर 'क्षत् इय् अ' स्थिति में वर्ण सम्मेलन होने पर 'क्षत्रिय' से प्रथमा विभक्ति एक वचन में सु विभक्ति के सकार को रुत्व और विसर्ग होकर क्षत्रियः (क्षत्रिय जाति) रूप सिद्ध होता है।

अन्यत्र क्षात्रिः – क्षत्रिय जाति से भिन्न अपत्य अर्थ में 'क्षात्रिः' प्रयोग होता है।

क्षात्रिः – 'क्षत्रस्य अपत्यम् अजातिः पुमान्' (क्षत्र से शूद्रा आदि में उत्पन्न पुत्र) इस विग्रह में षष्ठ्यन्त समर्थ पद 'क्षत्र ङस् अजात्यपत्यम्' इस अलौकिक विग्रह में क्षत्र शब्द के अकारान्त होने से 'अत इञ्' सूत्र से जाति भिन्न अपत्य अर्थ में इञ् प्रत्यय अनुबन्ध ञकार की इत् संज्ञा और लोप होकर 'क्षत्र ङस् इ' समुदाय की 'कृत्तद्धितसमासाश्च' सूत्र से प्रातिपदिक संज्ञा 'सुपो धातु प्रातिपदिकयोः' सूत्र से विभक्ति का लोप होकर 'क्षत्र इ' स्थिति में 'तद्धितेषु अचाम् आदेः' सूत्र से आदि वृद्धि 'क्षात्र इ' समुदाय में 'क्षात्र' की 'यचि भम्' सूत्र से भ संज्ञा होने पर उसके अन्तिम अकार का 'यस्येति च' सूत्र से लोप होकर 'क्षात्रि' प्रातिपदिक से प्रथमा विभक्ति के एक वचन में सु विभक्ति का रुत्व और विसर्ग होने पर 'क्षात्रिः' रूप सिद्ध होता है।

(ठक् प्रत्यय का विधि सूत्र)

सूत्र – रेवत्यादिभ्यष्ठक् 4/1/46

सूत्र पद विवरण – सूत्र में रेवतादिभ्यः पंचम्यन्त और ठक् प्रथमान्त दो पद हैं।

सूत्रार्थ – रेवत्यादि गण में पठित शब्दों से अपत्य अर्थ में अन्य प्रत्ययों का निषेध करके ठक् प्रत्यय होता है। ठक् प्रत्यय में ककार की 'हलन्त्यम्' सूत्र से इत् संज्ञा एवं उसका 'तस्य लोपः' सूत्र से लोप होकर 'ठ' शेष रहता है और उसे कित् कहते हैं।

रेवत्यादि गण– रेवती, अश्वपाली, मणिपाली, द्वारपाली, वृकवञ्चिन्, वृकबन्धु, वृकग्राह, कर्णग्राह, दण्डग्राह, कुक्कुटाक्ष, ककुदाक्ष, चामरग्राह– ये बारह शब्द हैं। इस शब्द समूह में रेवती शब्द आरंभ में है, अतः इसको रेवत्यादि गण कहते हैं।

('इक्' आदेश का विधि सूत्र)

सूत्र – ठस्येकः 7/3/50

वृत्तिः – अङ्गात् परस्य ठस्य 'इक' आदेशः स्यात्। रैवतिकः।

सूत्र पद का विवरण – ठस्य षष्ठयन्त और इकः प्रथमान्त दो पद हैं।

सूत्रार्थ – अंग से परे 'ठ्' को 'इक्' आदेश हो। अर्थात् ठ को इक होता है।

व्याख्या – जिस प्रकृति से जिस प्रत्यय का विधान होता है, उस प्रत्यय के पर में रहते प्रकृति की 'यस्मात् प्रत्ययविधिः तदादि प्रत्ययेऽङ्गम्' सूत्र से अङ्ग संज्ञा होती है। अतः अंग से पर में प्रत्यय के 'ठ्' को इस सूत्र से 'इक' आदेश होता है।

रैवतिकः – रेवत्याः अपत्यं पुमान् (रेवती का पुत्र) इस विग्रह में 'रेवती ङस् अपत्यम्' इस अलौकिक विग्रह में रेवती शब्द स्त्री प्रत्ययान्त है, अतः स्त्रीभ्यो ढक्' सूत्र से ढक् प्रत्यय प्राप्त है, किन्तु उसको बाधकर विशेष सूत्र होने से 'रेवत्यादिभ्यः ठक्' सूत्र से ठक् प्रत्यय और 'क्' अनुबन्ध का लोप होकर 'रेवती ङस् ठ' समुदाय की प्रातिपदिक संज्ञा और 'सुपो धातु प्रातिपदिकयोः' सूत्र से विभक्ति का लोप होकर 'रेवती ठ' स्थिति में 'यस्मात् प्रत्ययविधिः तदादि प्रत्ययेऽङ्गम्' सूत्र से 'रेवती' समुदाय की अङ्ंग संज्ञा होने पर 'ठस्येकः' सूत्र से प्रत्यय 'ठ्' को इक् आदेश होने पर 'रेवती इक् अ' स्थिति में प्रत्यय के कित् होने से 'किति च' सूत्र से आदिवृद्धि होकर 'रैवती इक' स्थिति में 'रैवती' की 'यचि भम्' सूत्र से भ संज्ञा होने से अन्तिम ईकार का 'यस्येति च' सूत्र से लोप होने पर 'रैवत् इक' सम्मेलन से 'रैवतिक' प्रातिपदिक से प्रथमा विभक्ति एक वचन में सु विभक्ति को रुत्व और विसर्ग होने पर 'रैवतिकः' रूप सिद्ध होता है।

('अञ्' प्रत्यय विधि सूत्र)

सूत्र – जनपदशब्दात् क्षत्रियाद् अञ् 4/1/168

वृत्तिः – जनपद – क्षत्रिय – वाचकात् शब्दात् अञ् स्याद् अपत्ये। पाञ्चालः।

सूत्र पद विवरण – जनपदशब्दात् पंचम्यन्त, क्षत्रियात् पंचम्यन्त और अञ् प्रथमान्त तीन पद हैं।

सूत्रार्थ – जो शब्द जनपद और क्षत्रिय दोनों अर्थों के समान रूप से वाचक हैं, उन शब्दों से अपत्य अर्थ में अञ् प्रत्यय हो।

व्याख्या – प्रान्त, प्रदेश या उस बड़े भूभाग को जनपद कहते हैं, जहाँ एक शासक हो। जैसे– पञ्चाल, कोशल, मगध, केरल आदि जनपद वाचक शब्द हैं। ये शब्द उस जनपद के शासक क्षत्रिय के भी वाचक हैं। अतः ये शब्द जनपद के समान क्षत्रिय अर्थ के भी वाचक हैं। प्रकृत सूत्र से इस प्रकार के शब्दों से अपत्य अर्थ में अञ् प्रत्यय होता है।

पाञ्चालः – पञ्चालस्य अपत्यं पुमान् (पंचाल क्षत्रिय का पुत्र) इस विग्रह में षष्ठ्यन्त 'पञ्चाल ङस् अपत्य सु' इस अलौकिक विग्रह में 'जनपद शब्दात् क्षत्रियाद् अञ्' सूत्र से अञ् प्रत्यय, 'ञ्' अनुबन्ध की इत् संज्ञा और 'तस्य लोपः' सूत्र से लोप होने पर 'पञ्चाल ङस् अ' समुदाय की प्रातिपदिक संज्ञा 'सुपो धातु प्रातिपदिकयोः' सूत्र से विभक्ति का लोप होकर 'पञ्चाल अ'

इस स्थिति में प्रत्यय के ञित् होने से 'तद्धितेषु अचाम् आदेः' सूत्र से आदिवृद्धि होकर 'पाञ्चाल अ' समुदाय में प्रत्यय से पूर्ववर्ती 'पाञ्चाल' की 'यचि भम्' सूत्र से भ संज्ञा होने पर अन्त्य अकार का 'यस्येति च' सूत्र से लोप होकर 'पाञ्चाल' प्रातिपदिक से प्रथमा विभक्ति एकवचन में सु विभक्ति को 'ससजुषो रुः' सूत्र से रु, अनुबन्ध लोप और 'र्' को 'खरवसानयोः विसर्जनीयः' सूत्र से विसर्ग होकर पाञ्चालः रूप सिद्ध होता है।

(अपत्य धर्म का अतिदेश (आरोप) करने वाली वार्तिक)

वार्तिक – क्षत्रिय–समान–शब्दाद् जनपदात् तस्य राजनि अपत्यवत्। पञ्चालानां राजा–पाञ्चालः।

अर्थ – क्षत्रिय जाति वाचक शब्द के समान जनपद वाचक षष्ठ्यन्त समर्थ पद से उसके राजा अर्थ में अपत्य अर्थ के समान प्रत्यय हो।

व्याख्या – सूत्र छः प्रकार के होते हैं–

संज्ञा च परिभाषा च विधिः नियम एव च।
अतिदेशोऽधिकारश्च षड्–विधं सूत्र लक्षणम्।।

1. संज्ञा सूत्र, 2. परिभाषा सूत्र, 3. विधि सूत्र, 4. नियम सूत्र, 5. अतिदेश सूत्र और 6. अधिकार सूत्र।

सूत्रों के समान वार्तिकों में भी उक्त छः प्रकार होते हैं। यह वार्तिक 'राजा' अर्थ में अपत्य अर्थ का अतिदेश (आरोप) करती है। फलस्वरूप अपत्य अर्थ वाले प्रत्यय राजा अर्थ में भी क्षत्रिय और जनपद दोनों अर्थों के समान रूप से वाचक प्रकृति से होंगे।

पाञ्चालः – पञ्चालानां राजा (पंजाब के राजा) इस लौकिक विग्रह में समर्थ षष्ठ्यन्त पद 'पञ्चाल आम् राजा' इस अलौकिक विग्रह में 'पञ्चाल' शब्द पंजाब प्रान्त और वहाँ के निवासी क्षत्रिय दोनों अर्थों का वाचक है, अतः 'क्षत्रिय–समान–शब्दाद् जनपदात् तस्य राजनि अपत्यवत्' इस वार्तिक के अतिदेश के अनुसार 'जनपद शब्दात् क्षत्रियाद् अञ्' सूत्र से अञ् प्रत्यय, 'ञ्' अनुबन्ध की इत् संज्ञा और लोप होकर 'पञ्चाल आम् अ' इस समुदाय की प्रातिपदिक संज्ञा, विभक्ति का लोप होने पर 'पञ्चाल अ' स्थिति में प्रत्यय के ञित् होने से 'तद्धितेषु अचाम् आदेः' सूत्र से आदिवृद्धि 'पाञ्चल अ' इस स्थिति में अजादि प्रत्यय 'अ' के पर में रहने से 'पाञ्चाल' की 'यचि भम्' से भ संज्ञा होने पर पाञ्चाल के अन्तिम लकारोत्तर अकार का 'यस्येति च' सूत्र से लोप होकर 'पाञ्चाल' प्रातिपदिक से प्रथमा विभक्ति के एक वचन में सु विभक्ति का अनुबन्ध लोप, 'ससजुषो रुः' इस सूत्र से रुत्व और 'खरवसानयोः विसर्जनीयः' इस सूत्र से विसर्ग होकर पाञ्चालः रूप सिद्ध होता है। इस रूपसिद्धि का परिचय और संगत सूत्रों के विनियोग से आप अन्य शब्दों की सिद्धि भी कर सकते हैं।

(अण् प्रत्यय विधि वार्तिक)

वार्तिक – पूरोरण् वक्तव्यः। पौरवः।

अर्थ – पूरोः पंचम्यन्त, अण् प्रथमान्त और वक्तव्यः प्रथमान्त यहां ये तीन पद हैं। 'पूरु' समर्थ षष्ठ्यन्त पद से राजा अर्थ में अण् प्रत्यय हो।

व्याख्या – अण् प्रत्यय में 'ण्' अनुबन्ध है, उसकी 'हलन्त्यम्' सूत्र से इत् संज्ञा और 'तस्य लोपः' सूत्र से लोप होने पर 'अ' शेष रहता है जो 'णित्' कहलाता है।

'पूरु' शब्द क्षेत्र विशेष और वहाँ के निवासी क्षत्रियों का वाचक है। नगरीय लोगों का भी बोधक है।

पौरवः – पूरूणां राजा – (पूरु = क्षेत्र विशेष के निवासियों का राजा) इस विग्रह में 'पूरु आम् राजा' इस अलौकिक विग्रह में 'पूरोरण् वक्तव्यः' इस वार्तिक से राजा अर्थ में अण् प्रत्यय, अनुबन्ध लोप होकर 'पूरु आम् अ' इस समुदाय की 'कृत्तद्धित समासाश्च' इस सूत्र से प्रातिपदिक संज्ञा होने पर 'सुपो धातु प्रातिपदिकयोः' इस सूत्र से विभक्ति का लोप होकर 'पूरु अ' इस स्थिति में प्रत्यय के णित् होने से 'तद्धितेषु अचाम् आदेः' इस सूत्र से आदिवृद्धि होने पर 'पौरु अ' इस स्थिति में 'ओर्गुणः' इस सूत्र से उकार को गुण होने पर 'पौर् ओ अ' इस स्थिति में 'एचोऽयवायावः' इस सूत्र से ओ को अव् आदेश होने पर 'पौर् अव् अ' इस स्थिति में वर्ण सम्मेलन होने पर 'पौरव' प्रातिपदिक से प्रथमा विभक्ति के एक वचन में सु विभक्ति और उसको रुत्व एवं विसर्ग होकर 'पौरवः' रूप सिद्ध होता है।

(ड्यण् प्रत्यय विधि वार्तिक)

वार्तिक – पाण्डोर्ड्यण्। पाण्ड्यः।

पद विवरण – पाण्डोः पंचम्यन्त और ड्यण् प्रथमान्त पद है।

अर्थ –'पाण्डु' शब्द से राजा अर्थ में ड्यण् प्रत्यय हो।

व्याख्या – 'ड्यण्' प्रत्यय में 'चुटू' इस सूत्र से 'ड्' की इत् संज्ञा तथा 'हलन्त्यम्' इस सूत्र से 'ण्' की इत् संज्ञा होने पर 'तस्य लोपः' सूत्र से दोनों का लोप होता है। प्रत्यय का प्रायोगिक स्वरूप केवल 'य' है। यह प्रत्यय डित् और णित् है।

वार्तिक में गृहीत पाण्डु शब्द श्वेत गुण का वाचक नहीं है तथा युधिष्ठिर के पिता का भी वाचक नहीं है। क्योंकि इन दोनों अर्थों में पाण्डु शब्द जनपद और वहाँ के निवासी क्षत्रिय का वाचक नहीं होगा। इस वार्तिक में 'जनपदशब्दात् क्षत्रियात्' पदों की अनुवृत्ति होती है, अतः जो पाण्डु शब्द जनपद और क्षत्रिय दोनों अर्थों का वाचक है, उसी पाण्डु शब्द का इस वार्तिक में ग्रहण है। भारत के दक्षिण भाग में पाण्डु जनपद है, वहाँ के निवासी क्षत्रियों को भी पाण्डु कहते हैं। अतः यहाँ उसी पाण्डु शब्द का ग्रहण है। उससे अपत्य और राजा दोनों अर्थों में यह ड्यण् प्रत्यय होता है।

पाण्ड्यः – पाण्डोः अपत्यम् अथवा पाण्डूनां राजा– इस विग्रह में 'पाण्डु ङस् अपत्यम्' अथवा 'पाण्डु आम् राजा' इस अलौकिक विग्रह में 'पाण्डोर्ड्यण्' वार्तिक से ड्यण् प्रत्यय होने पर प्रत्यय के दोनों अनुबन्धों का लोप होकर 'पाण्डु ङस् य' अथवा 'पाण्डु आम् य' इस स्थिति में समुदाय की प्रातिपदिक संज्ञा होने पर 'सुपो धातु प्रातिपदिकयोः' इस सूत्र से विभक्ति का लोप होकर 'पाण्डु य' इस स्थिति में प्रत्यय के णित् होने से 'तद्धितेषु आचाम् आदेः' इस सूत्र से प्रकृति का आदि अच् पकारोत्तर 'आ' वृद्ध होने पर भी 'पर्जन्यवत् लक्षण–प्रवृत्तिः' इस न्याय से आदिवृद्धि होगी। इसी प्रकार 'डित्त्व– सामर्थ्याद् अभस्यापि टेर्लोपः' इस न्याय से ओर्गुणः को बाध कर प्रकृति के अन्तिम 'उ' का लोप होने पर 'पाण्ड्य' प्रातिपदिक से प्रथमा विभक्ति के एक वचन में सु विभक्ति को रुत्व और विसर्ग होकर 'पाण्ड्यः' रूप सिद्ध होता है।

विशेष – इस रूप की सिद्धि में दो न्यायों का प्रयोग है। प्रथम न्याय है– 'पर्जन्यवत् लक्षण प्रवृत्तिः' जैसे– पर्जन्य=मेघ सरोवर और मरुस्थल सब जगह वर्षा करता है, वैसे आदेश सूत्र प्राप्त होने पर सभी लक्ष्यों में प्रवृत्त होता है। यहाँ 'पाण्डु य' स्थिति में प्रत्यय के णित् होने से आदिवृद्धि प्राप्त है, अतः अच् 'आ' वृद्ध होने पर भी उसको पुनः 'आ' वृद्धि होगी। इस न्याय को 'समुद्रे जल वर्षण न्यायः' भी कहते हैं। दूसरा न्याय है– 'डित्त्वसामर्थ्याद् अभस्यापि टेर्लोपः'। प्रत्यय में 'ड्' अनुबन्ध होने पर वह प्रत्यय 'डित्' होता है। प्रत्यय में 'ड्' अनुबन्ध लगाना, उसकी इत् संज्ञा करके उसका लोप करना, यह सब निरर्थक नहीं है। आचार्य पाणिनि ने अनुबन्ध का संयोजन निरर्थक नहीं किया है। उसका प्रयोजन है– टि लोप। इसीलिए व्याकरण शास्त्र में यह प्रसिद्धि है– 'या या संज्ञा, सा सा फलवती' अर्थात् प्रयोजन विशेष से संज्ञा का विधान होता है। यहाँ 'पाण्डु य' स्थिति में 'अचोऽन्त्यादि टि' इस सूत्र से पाण्डु शब्द के अन्तिम अच् 'उ' की टि संज्ञा होती है तथा 'यचि भम्' सूत्र से उसकी भ संज्ञा भी होती है, क्योंकि यहाँ यकारादि तद्धित प्रत्यय पर में है। अतः यहाँ 'उ' भसंज्ञक टि है। जहाँ भ संज्ञक टि न हो, उसका भी लोप होता है डित् प्रत्यय पर में रहने पर। इस प्रकार यहाँ प्रत्यय में 'ड्' अनुबन्ध के संयोजन का फल है– 'ओर्गुणः' सूत्र से प्राप्त गुण को बाध कर टि लोप।

(ण्य प्रत्यय का विधि सूत्र)

सूत्र – कुरु– नादिभ्यो ण्यः 4/1/172

वृत्तिः – कौरव्यः। नैषध्यः।

सूत्रार्थ – सूत्र में कुरु–नादिभ्यः पंचम्यन्त और ण्यः प्रथमान्त दो पद हैं। जनपद और वहाँ के निवासी क्षत्रिय दोनों अर्थों के समान रूप से वाचक कुरु शब्द और 'न' वर्ण जिसके आरंभ में हो, ऐसे निषध, निवाड, निमि आदि शब्दों से राजा अर्थ में ण्य प्रत्यय होता है। इस प्रत्यय में 'ण्' अनुबन्ध है, इसकी 'चुटू' सूत्र से इत् संज्ञा और 'तस्य लोपः' सूत्र से लोप होता है। प्रत्यय का प्रायोगिक स्वरूप 'य' है, जो णित् है।

कौरव्यः – कुरूणां राजा (कुरु देश का राजा) इस विग्रह में तथा षष्ठ्यन्त 'कुरु आम् राजा' इस अलौकिक विग्रह में 'कुरु–नादिभ्यो ण्यः' सूत्र से ण्य प्रत्यय अनुबन्ध लोप होने पर 'कुरु आम् अ' स्थिति होती है, प्रत्यय का विधान हो जाने पर अलौकिक विग्रह से अर्थवाचक पद का प्रयोग समाप्त हो जाता है, क्योंकि उस अर्थ का बोध प्रत्यय के द्वारा होता है, अत एव न्याय प्रसिद्ध है– 'उक्तार्थानाम् अप्रयोगः' इति। अब अलौकिक समुदाय की 'कृत्तद्धित समासाश्च' सूत्र से प्रातिपदिक संज्ञा होने पर 'सुपो धातुप्रातिपदिकयोः' इस सूत्र से मध्यवर्ती 'आम्' विभक्ति का लोप होकर 'कुरु य' इस स्थिति में प्रत्यय के णित् होने से 'तद्धितेषु अचाम् आदेः' सूत्र से आदि अच् ककारोत्तर 'उ' को 'औ' आदिवृद्धि होने पर 'कौरु य' इस स्थिति में यकारादि प्रत्यय पर में होने से 'यचि भम्' सूत्र से पूर्ववर्ती प्रकृति की भ संज्ञा होने पर 'ओर्गुणः' सूत्र से भसंज्ञक 'उ' को गुण 'ओ' होने पर 'कौर ओ य' इस स्थिति में 'एचोऽयवायावः' सूत्र से 'ओ' को 'अव्' आदेश होने पर 'कौर् अव् य' इस स्थिति में वर्णसम्मेलन होकर 'कौरव्य' प्रातिपदिक से प्रथमा विभक्ति के एकवचन में सु विभक्ति अनुबन्ध लोप 'ससजुषो रुः' सूत्र से स् को रु आदेश, अनुबन्ध लोप होने पर 'र' को 'खरवसानयोः विसर्जनीयः' सूत्र से विसर्ग होकर कौरव्यः रूप सिद्ध होता है।

नैषध्यः – निषधानां राजा (निषध–मगध देश का राजा) इस विग्रह में तथा षष्ठ्यन्त समर्थ 'निषध आम् राजा' इस अलौकिक विग्रह में निषध शब्द क्षत्रिय और जनपद का वाचक है, अतः 'कुरुनादिभ्यो ण्यः' इस सूत्र से ण्य प्रत्यय होने पर 'ण्' अनुबन्ध का 'चुटू' सूत्र से इत् संज्ञा 'तस्य लोपः' सूत्र से लोप होने पर 'निषध आम् य' इस स्थिति में समुदाय की 'कृत्तद्धित समासाश्च' सूत्र से प्रातिपदिक संज्ञा 'सुपो धातु प्रातिपदिकयोः' सूत्र से विभक्ति का लोप होकर 'निषध य' स्थिति में णित् प्रत्यय पर में होने से 'तद्धितेषु अचाम् आदेः' सूत्र से आदि 'इ' को 'ऐ' वृद्धि होकर 'नैषध य' इस स्थिति में यकारादि प्रत्यय पर में होने से 'यचि भम्' सूत्र से प्रकृति 'नैषध' की भ संज्ञा होने पर 'यस्येति च' सूत्र से अन्तिम धकारोत्तर 'अ' का लोप होकर 'नैषध्य' प्रातिपदिक से प्रथमा विभक्ति के एकवचन में 'सु' विभक्ति होने पर 'उ' अनुबन्ध का 'उपदेशेऽजनुनासिक इत्' इस सूत्र से इत् संज्ञा 'तस्य लोपः' सूत्र से लोप होकर 'ससजुषो' 'रुः' सूत्र से 'स्' को रु आदेश अनुबन्ध लोप होकर 'को 'खरवसानयोः विसर्जनीयः' सूत्र से विसर्ग होकर नैषध्यः रूप निष्पन्न होता है।

(तद् राज संज्ञा सूत्र)

सूत्र – ते तद्राजाः 4/1/174

वृत्तिः – अञ् आदयः 'तद्राज' संज्ञाः स्युः।

सूत्र पद विवरण – ते प्रथमा बहुवचनान्त और तद्राजाः प्रथमा बहुवचनान्त दो पद हैं।

सूत्रार्थ – अञ् आदि प्रत्ययों की 'तद्राज' संज्ञा हो।

व्याख्या – लघुकौमुदी में अञ्, अण्, ञ्यण् और ण्य पूर्ववर्ती उक्त चार प्रत्यय तद्राज संज्ञक हैं।

(तद्राज प्रत्यय लुक् विधि सूत्र)

सूत्र – तद्राजस्य बहुषु तेनैवास्त्रियाम्' 2/4/62

वृत्तिः – बहुषु अर्थेषु तद्राजस्य लुक्य तदर्थकृते बहुत्वे, न तु स्त्रियाम्। इक्ष्वाकवः, पञ्चालाः इत्यादि।

सूत्र पद विवरण – इस सूत्र में तद्राजस्य षष्ठ्यन्त, बहुषु सप्तम्यन्त, तेन तृतीयान्त सर्वनाम, एव निर्धारणार्थक अव्यय, अस्त्रियाम् सप्तम्यन्त पाँच पद हैं।

सूत्रार्थ – बहुत्व की विवक्षा में 'तद्राज' प्रत्यय का लुक् = लोप हो, यदि बहुत्व उस तद्राज प्रत्यय के अर्थ के कारण ही हो, परन्तु स्त्री लिंग में लुक् न हो।

व्याख्या – 'तद्राज' संज्ञक प्रत्ययों का अर्थ राजा है। यदि उस राजा अर्थ में आदर– सम्मान प्रकट करने के लिए बहुवचन का प्रयोग अभीष्ट होगा तो 'तद्राज' प्रत्यय का लुक् हो जायगा। लुक् का अर्थ लोप होता है। लुक् के समान श्लु और लुप् शब्दों का भी लोप के लिए प्रयोग होता है। इस प्रकार व्याकरण शास्त्र में किसी प्रत्यय के अप्रयोग हेतु 'प्रत्ययस्य लुक् श्लु लुपः' सूत्र से प्रत्यय की लुक्, श्लु, लुप् और 'तस्य लोपः' सूत्र से लोप चार संज्ञाओं का व्यवहार होता है, किंतु उनमें सूक्ष्म अन्तर है। प्रत्यय का लोप होने पर 'प्रत्ययलोपे प्रत्ययलक्षणम्' इस अतिदेश सूत्र से प्रत्ययाश्रित कार्य होते हैं। जैसे 'हे हरे' में हरि शब्द से सम्बोधन विभक्ति के एक वचन में सु विभक्ति को 'एकवचनं सम्बुद्धिः' इस सूत्र से संबुद्धि संज्ञा होने पर 'एङ् ह्रस्वात् सम्बुद्धेः' इस सूत्र से उसका लोप होता है। तदनन्तर 'प्रत्ययलोपे प्रत्ययलक्षण' सूत्र से अतिदेश होने के कारण 'ह्रस्वस्य गुणः' सूत्र से हरि के ह्रस्व 'इ' को गुण होकर 'हे हरे!' रूप सिद्ध होता है। परन्तु लुक्, श्लु या लुप् होने पर 'प्रत्ययलोपे प्रत्ययलक्षणम्' सूत्र से अतिदेश नहीं होता है। जैसे 'कति' शब्द से प्रथमा बहुवचन जस् विभक्ति प्रत्यय का 'षड्भ्यो लुक्' सूत्र से लुक् होने पर तदाश्रित कार्य 'जसि च' सूत्र से गुण नहीं होता, क्योंकि 'न लुमताङ्गस्य' सूत्र निषेध कर देता है। इसी प्रकार 'श्लु' होने पर धातु को द्वित्व होता है, जैसे– हु धातु से शप् को श्लु होने के कारण धातु को द्वित्व होकर 'जुहोति' (यज्ञ करता है) रूप निष्पन्न होता है। प्रत्यय का लुप् होने पर 'लुपि युक्तवद् व्यक्तिवचने' सूत्र की प्रवृत्ति होती है। फलस्वरूप प्रत्यय के अभाव में प्रकृति के लिंग और वचन का ही प्रयोग होता है, जैसे– पञ्चालानां निवासः 'पञ्चालाः' यहाँ निवासः एक वचन है किन्तु तदर्थक प्रत्यय का 'जनपदे लुप्' सूत्र से लुप् हो जाने के कारण प्रकृति 'पञ्चालानाम्' में प्रयुक्त बहुवचन और पुंलिंग का ही प्रयोग होकर 'पञ्चालाः जनपदः' प्रयोग सिद्ध होता है। एवञ्च लोप, लुक्, श्लु और लुप् में प्रत्यय का अदर्शन समान होने पर भी परस्पर सूक्ष्म अन्तर है, जो व्याकरण शास्त्र के लिए उपादेय है।

इक्ष्वाकवः – 'इक्ष्वाकोः अपत्यानि पुमांसः' अथवा 'इक्ष्वाकूणां राजानः' इस विग्रह में समर्थ षष्ठ्यन्त 'इक्ष्वाकु ङस् अपत्यानि' अथवा 'इक्ष्वाकु आम् राजानः' इस अलौकिक विग्रह में 'जनपदशब्दात् क्षत्रियाद् अञ्' इस सूत्र से अञ् प्रत्यय, 'ञ्' अनुबन्ध की 'हलन्त्यम्' सूत्र से इत् संज्ञा 'तस्य लोपः' सूत्र से लोप होने पर 'इक्ष्वाकु ङस् अ' अथवा 'इक्ष्वाकु आम् अ' इस स्थिति में 'कृत्तद्धित समासाश्च' सूत्र से प्रातिपदिक संज्ञा 'सुपो धातुप्रातिपदिकयोः' सूत्र से विभक्ति का लोप होने पर 'इक्ष्वाकु अ' इस स्थिति में 'ते तद्राजा' इस सूत्र से 'अ' प्रत्यय की तद्राज संज्ञा होने पर 'तद्राजस्य बहुषु तेनैवास्त्रियाम्' इस सूत्र से तद्राजसंज्ञक अञ् प्रत्यय का लुक् हो गया, क्योंकि यहाँ प्रत्यय के अर्थ अपत्य अथवा राजा में बहुत्व की विवक्षा है। प्रत्यय का लुक् हो जाने से 'इक्ष्वाकु' शब्द में 'प्रत्ययलोपे प्रत्ययलक्षणम्' सूत्र से अतिदेश होकर आदिवृद्धि आदि कार्य नहीं होगें, क्योंकि 'न लुमताङ्गस्य' सूत्र प्रत्यय–निमित्तक कार्य का निषेध कर देगा, अतः 'इक्ष्वाकु' प्रातिपदिक से प्रथमा विभक्ति के बहुवचन में 'स्वौजस्–' इत्यादि सूत्र से जस् विभक्ति, अनुबन्ध लोप होने पर 'इक्ष्वाकु अस्' इस स्थिति में 'जसि च' सूत्र से 'उ' को गुण 'ओ' 'एचोऽयवायावः' सूत्र से 'ओ' को 'अव्' आदेश तथा पदान्त 'स्' को 'ससजुषो रुः' सूत्र से रुत्व अनुबन्ध लोप और 'खरवसानयोः विसर्जनीयः' सूत्र से 'र्' को विसर्ग होकर इक्ष्वाकवः रूप सिद्ध होता है।

पञ्चालाः – 'पञ्चालस्य अपत्यानि पुमांसः' अथवा 'पञ्चालानां राजानः' इस विग्रह में 'पञ्चाल ङस् अपत्यानि' अथवा 'पञ्चाल आम् राजानः' इस अलौकिक विग्रह में षष्ठ्यन्त पञ्चाल से 'जनपदशब्दात् क्षत्रियाद् अञ्' इस सूत्र से विहित अञ् प्रत्यय का 'ते तद्राजा' सूत्र से तद्राज संज्ञा और बहुत्व विवक्षा होने के कारण 'तद्राजस्य बहुषु तेनैवास्त्रियाम्' सूत्र से लुक् हो जाने पर तथा 'कृत्तद्धित समासाश्च' सूत्र से प्रातिपदिक संज्ञा और 'सुपो धातु प्रातिपदिकयोः' सूत्र से विभक्ति लोप हो जाने पर 'पञ्चाल' प्रातिपदिक से प्रथमा विभक्ति के बहुवचन में जस् प्रत्यय 'चुटू' सूत्र से 'ज्' की इत् संज्ञा 'तस्य लोपः' से लोप होने पर 'पञ्चाल अस्' इस स्थिति में 'प्रथमयोः पूर्वसवर्णः' से पूर्व सवर्ण दीर्घ होने पर 'पञ्चालास्' के 'स्' को 'ससजुषो रुः' सूत्र से रुत्व अनुबन्ध लोप 'र्' को 'खरवसानयोः विसर्जनीयः' सूत्र से विसर्ग होने पर पञ्चालाः रूप निष्पन्न होता है।

इत्यादि – इसी प्रकार जनपद के समान क्षत्रिय के वाचक शब्द से निष्पन्न कुरवः, पाण्डवः, निषधाः आदि शब्द भी बहुवचन में राजा और अपत्य अर्थ के वाचक हैं।

('तद्राज' प्रत्यय के लुक् का विधि सूत्र)

सूत्र – कम्बोजाल्लुक् 4/1/175

वृत्तिः – अस्मात् तद्राजस्य लुक्। कम्बोजः। कम्बोजौ।

सूत्र पद विवरण – सूत्र में कम्बोजात् पंचम्यन्त और लुक् प्रथमान्त पद हैं।

सूत्रार्थ – 'कम्बोज' शब्द से विहित 'तद्राज' संज्ञक प्रत्यय का लुक् हो। 'कम्बोज' शब्द भी देश विशेष और वहाँ के शासक क्षत्रिय का वाचक है।

कम्बोजः – 'कम्बोजस्य अपत्यं पुमान्' अथवा 'कम्बोजानां राजा' (कम्बोज का पुत्र अथवा कम्बोज देश का राजा) इस विग्रह में षष्ठ्यन्त समर्थ 'कम्बोज ङस् अपत्यम्' अथवा 'कम्बोज आम् राजा' इस अलौकिक विग्रह में 'जनपद शब्दात् क्षत्रियाद् अञ्' सूत्र से अञ् प्रत्यय, अनुबन्ध लोप होने पर 'कम्बोज ङस् अ' अथवा 'कम्बोज आम् अ' इस स्थिति में 'कृत्तद्धित समासाश्च' सूत्र से समुदाय की प्रातिपदिक संज्ञा होने पर 'सुपो धातुप्रातिपदिकयोः' सूत्र से विभक्ति का लोप होने पर 'कम्बोज अ' इस स्थिति में 'ते तद्राजा' सूत्र से 'अ' प्रत्यय की तद्राज संज्ञा होने पर 'कम्बोजाल्लुक्' सूत्र से 'अ' प्रत्यय का लुक् होने पर 'कम्बोज' शेष रहता है। यहाँ प्रत्यय ञित् होने से 'तद्धितेषु अचाम् आदेः' सूत्र से आदिवृद्धि प्राप्त है किन्तु 'न लुमताङ्गस्य' सूत्र निषेध करता है, अतः 'प्रत्ययलोपे प्रत्ययलक्षणम्' सूत्र से अतिदेश नहीं होता और फलस्वरूप आदिवृद्धि नहीं होती है। 'कम्बोज' शब्द से प्रथमा विभक्ति के एक वचन में 'सु' प्रत्यय, अनुबन्धलोप, रुत्व और विसर्ग होकर 'कम्बोजः' तथा द्विवचन में 'औ' प्रत्यय होने पर 'वृद्धिरेचि' सूत्र से वृद्धि एकादेश होने पर 'कम्बोजौ' रूप सिद्ध होते हैं।

('तद्राज' प्रत्यय के लुक् का विधान करने वाली वार्तिक)

वार्तिक – कम्बोजादिभ्य इति वक्तव्यम्। चोलः। शकः। केरलः। यवनः।

पद विवरण – कम्बोजादिभ्यः पंचम्यन्त, इति शब्द स्वरूप बोधक अव्यय, वक्तव्यम् प्रथमान्त पद हैं।

अर्थ – कम्बोज आदि शब्दों से विहित 'तद्राज' संज्ञक प्रत्यय का लुक् हो, यह कहना चाहिए।

व्याख्या – कम्बोजादि गण है। इसमें कम्बोज, चोल, केरल, शक और यवन कुल पाँच शब्द हैं। इसके आरंभ में कम्बोज शब्द है, अतः इस गण को कम्बोजादि कहते हैं। इन शब्दों से अपत्य या राजा अर्थ में विहित अञ् प्रत्यय का सभी वचनों में नित्य लुक् होता है। अर्थात् ये शब्द प्रत्यय के संयोग के बिना ही देश, राजा, पुत्र और वहाँ के निवासी इन सभी अर्थों के बोधक हैं। वस्तुतः यहाँ क्षत्रिय शब्द से शासक अर्थ अभीष्ट है।

चोलः, शकः, केरलः, यवनः – चोलस्य अपत्यं पुमान् (चोल राजा का पुत्र) अथवा 'चोलानां राजा' (चोल देश का राजा), शकस्य अपत्यं पुमान् अथवा शकानां राजा, केरलस्य अपत्यं पुमान् या केरलानां राजा, यवनस्य अपत्यं पुमान् या यवनानां राजा इन विग्रहों में तथा 'चोल ङस् अपत्यम्' या 'चोल आम् राजा' इत्यादि अलौकिक विग्रहों में चोल, शक, केरल और यवन शब्द प्रदेश विशेष और वहाँ के शासक (क्षत्रिय) अर्थ के वाचक हैं, अतः इनसे 'जनपदशब्दात् क्षत्रियाद् अञ्' इस सूत्र से अपत्य और राजा अर्थों में अञ् प्रत्यय होता है। 'ते तद्राजा' इस सूत्र से अञ् की तद्राज संज्ञा होती है। 'कृत्तद्धितसमासाश्च' इस सूत्र से समुदाय की प्रातिपदिक संज्ञा होती है और 'सुपो धातुप्रातिपदिकयोः' इस सूत्र से विभक्ति का लोप होने पर 'चोल अ',

'शक अ', 'केरल अ' और 'यवन अ' इस स्थिति में 'कम्बोजादिभ्य इति वक्तव्यम्' इस वार्तिक से अञ् प्रत्यय का लुक् होने पर 'तद्धितेषु अचाम् आदेः' इस सूत्र से आदिवृद्धि नहीं होती है, क्योंकि 'न लुमताङ्गस्य' सूत्र तन्निमित्तक कार्य का निषेध करता है। अतः अवशिष्ट चोल, शक, केरल और यवन शब्दों से प्रथमा विभक्ति के एक वचन में सु प्रत्यय होने पर अनुबन्ध लोप 'स्' को 'ससजुषो रुः' इस सूत्र से 'रु' अनुबन्ध लोप होने पर 'खरवसानयोः विसर्जनीयः' सूत्र से 'र' को विसर्ग होकर चोलः, शकः, केरलः और यवनः रूप सिद्ध होते हैं।

इत्यपत्याधिकारः

इस प्रकार अपत्य (सन्तान) अर्थ के बोधक प्रत्ययों का अधिकार (अध्याय) पूर्ण होता है।

28.3 इकाई में प्रत्यय विधायक सूत्र

इकाई में प्रत्यय विधायक सूत्र हैं –

1. स्त्रीभ्यो ढक्
2. राज श्वशुराद् यत्
3. क्षत्राद् घः
4. रेवत्यादिभ्यष्ठक्
5. जनपदशब्दात् क्षत्रियाद् अञ्
6. कुरु–नादिभ्यो ण्यः

कुल 6 प्रत्यय विधायक सूत्र है। प्रत्यय विधायिका वार्तिकें कुल दो हैं –

1. पूरोरण् वक्तव्यः,
2. पाण्डोर्ड्यण्

28.4 सारांश

इस प्रकार इस इकाई में ढक्, यत्, घ, ठक्, अञ्, ण्य, अण् और ड्यण् इन आठ प्रत्ययों का अध्ययन है। इनमें अञ्, ण्य, अण् और ड्यण् प्रत्ययों की 'तद्राज' संज्ञा होती है। ये प्रत्यय राजा और अपत्य दोनों अर्थों में विहित होते हैं। इनका विधान जनपद विशेष और वहाँ के शासक (क्षत्रिय) अर्थों के वाचक शब्दों से होता है। राजा और पुत्र अर्थों में बहुत्व अभीष्ट होने पर इन 'तद्राज' संज्ञक प्रत्ययों का लुक् हो जाता है, किन्तु कम्बोजादि शब्दों से इनका नित्य लुक् होता है। प्रत्यय का लुक् हो जाने पर अवशेष प्रकृति ही प्रत्यय के अर्थ का और अपने अर्थ का बोध कराती है। संस्कृत में आभाणक है– यः शिष्यते स लुप्यमानार्थाभिधायी– अर्थात् जो शेष रहता है वही लुप्त होने वाले प्रत्यय के अर्थ का बोधन कराता है।

आरंभ के ढक्, यत्, घ और ठक् प्रत्यय केवल अपत्य (सन्तान) अर्थ के वाचक हैं। यहाँ प्रत्यय के 'ढ' को एय, 'घ' को इय और 'ठ' को इक आदेश होते हैं, जो प्रायोगिक रूप के अंग होते

हैं। यहाँ इस चर्चा से अवधेय है कि –पञ्चाल, केरल आदि शब्द मूलतः जनपद अर्थात् देश विशेष के वाचक हैं तथा देश विशेष अर्थ में संस्कृत भाषा में ये शब्द बहुवचन में ही प्रयुक्त होते हैं। अर्थात पंचाल देश के सभी निवासी अथवा केरल के निवासी। ये शब्द उस देश के निवासियों के भी वाचक होते हैं। देश के राजा/शासक अथवा उसके पुत्र के लिए भी प्रत्यय के साथ इन शब्दों का प्रयोग होता है। जैसे–पञ्चालाः – देश विशेष, पंजाब तथा पंजाब के निवासी गण एवं पाञ्चालः – पंचाल देश का राजा अथवा उस देश का एक निवासी अथवा उस राजा का एक पुत्र, अर्थात सभी निवासीगण एवं गांवों का राजा अथवा पुत्र (एक संख्यक)। 'जनपदशब्दात् क्षत्रियाद् अञ्' इस सूत्र में वर्णित यह आशय सभी तद्राज संज्ञक प्रत्ययों में समान रूप से प्रभावी होतां है।

28.5 शब्दावली

शब्द (पुलिङ्ग)	अर्थ	स्त्रीलिङ्गरूप	अर्थ
वैनतेयः	विनता का पुत्र	वैनतेयी	विनता की पुत्री
कानीनः	कुमारी कन्या का पुत्र	कानीनी	कुमारी कन्या की पुत्री
राजन्यः	क्षत्रिय का क्षत्रिय पुत्र	राजन्या	क्षत्रिय की क्षत्रिया पुत्री
श्वशुर्यः	ससुर का पुत्र साला	श्वशुर्या	ससुर की पुत्री साली
राजनः	राजा से उत्पन्न पुत्र	राजनी	राजा से उत्पन्न दासी पुत्री, दासी
क्षत्रियः	क्षत्रिय जाति का पुरुष	क्षत्रिया	क्षत्रिय जाति की स्त्री
क्षात्रिः	क्षत्रिय से उत्पन्न पुत्र	क्षात्री	क्षत्रिय से उत्पन्न दासी पुत्री दासी
रैवतिकः	रेवती का पुत्र	रैवतिकी	रेवती की पुत्री
पाञ्चालः	पंचाल देश के राजा उसका पुत्र	पाञ्चाली	पंचाल देश के राजा की पुत्री या
पौरवः	पूरु का पुत्र–राजा	पौरवी	पूरु की पुत्री
पाड्यः	पाण्डु देश का राजा उसका पुत्र	पाड्या	पाण्डु देश के राजा की पुत्री
कौरव्यः	कुरु का पुत्र/राजा	कौरव्या	कुरु की पुत्री

नैषध्यः राजा–पुत्र	निषध देश का	नैषध्या	निषध देश के राजा की पुत्री
इक्ष्वाकवः पुत्र गण	इक्ष्वाकु राजा	ऐक्ष्वाकव्यः	इक्ष्वाकु राजा की पुत्रियाँ उनके
पञ्चालाः	पंचाल देश के राजा या उनके पुत्र गण	पाञ्चाल्यः	पंचाल देश के राजा की पुत्रियाँ
कम्बोजः	कम्बोज देश का राजा या उसका पुत्र	काम्बोजी	कम्बोज देश के राजा की पुत्री
चोलः	चोल देश का राजा या उसका पुत्र	चौली	चोल देश के राज की पुत्री
शकः	शक देश का राजा या उसका पुत्र	शाकी	शक देश के राजा की पुत्री
केरलः	केरल देश के राजा या उसका पुत्र	कैरली	केरल देश के राजा की पुत्री
यवनः	यवन (यूनान) देश का राजा या उसका पुत्र	यावनी	यवन राजा की पुत्री

पाञ्चाल, ऐक्ष्वाकव, पाण्ड्य, कौरव्य आदि राजा अर्थ के वाचक शब्दों में 'तद्राज' प्रत्यय का बहुवचन में लुक् हो जाने से इनके शब्द रूप निम्नांकित प्रकार से होंगे–

पञ्चाल (पंजाब का राजा) पुलिङ्ग

विभक्ति	**एकवचन**	**द्विवचन**	**बहुवचन**
प्रथमा –	पाञ्चालः	पाञ्चालौ	पञ्चालाः
द्वितीया –	पाञ्चालम्	पाञ्चालौ	पञ्चालान्
तृतीया –	पाञ्चालेन	पाञ्चालाभ्याम्	पञ्चालेभ्यः
चतुर्थी –	पाञ्चालाय	पाञ्चालाभ्याम्	पञ्चालेभ्यः
पञ्चमी –	पाञ्चालात्–द्	पाञ्चालाभ्याम्	पञ्चालेभ्यः

षष्ठी –	पाञ्चालस्य	पाञ्चालयोः	पञ्चालानाम्
सप्तमी –	पाञ्चाले	पाञ्चालयोः	पञ्चालेषु
सम्बोधन–	हे पाञ्चाल	हे पाञ्चालौ	हे पञ्चालाः

ऐक्ष्वाकव (इक्ष्वाकु = अवध प्रान्त का राजा) पुलिङ्ग

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा –	ऐक्ष्वाकवः	ऐक्ष्वाकवौ	इक्ष्वाकवः
द्वितीया –	ऐक्ष्वाकवम्	ऐक्ष्वाकवौ	इक्ष्वाकून्
तृतीया –	ऐक्ष्वाकवेण	ऐक्ष्वाकवाभ्याम्	इक्ष्वाकुभिः
चतुर्थी –	ऐक्ष्वाकवाय	ऐक्ष्वाकवाभ्याम्	इक्ष्वाकुभ्यः
पञ्चमी –	ऐक्ष्वाकवात्–द्	ऐक्ष्वाकवाभ्याम्	इक्ष्वाकुभ्यः
षष्ठी –	ऐक्ष्वाकवस्य	ऐक्ष्वाकवयोः	इक्ष्वाकूणाम्
सप्तमी –	ऐक्ष्वाकवे	ऐक्ष्वाकवयोः	इक्ष्वाकुषु
संबोधन –	हे ऐक्ष्वाकव	हे ऐक्ष्वाकवौ	हे इक्ष्वाकवयः

पाण्ड्य (पाण्डु देश के नरेश) पुलिङ्ग

विभक्ति	एकवचन	द्विवचन	बहुवचन
प्रथमा –	पाण्ड्यः	पाण्ड्यौ	पाण्डवः
द्वितीया –	पाण्ड्यम्	पाण्ड्यौ	पाण्डून्
तृतीया –	पाण्ड्येन	पाण्ड्याभ्याम्	पाण्डुभिः
चतुर्थी –	पाण्ड्याय	पाण्ड्याभ्याम्	पाण्डुभ्यः
पंचमी –	पाण्ड्यात्–द्	पाण्ड्याभ्याम्	पाण्डुभ्यः
षष्ठी –	पाण्ड्यस्य	पाण्ड्ययोः	पाण्डूनाम्
सप्तमी –	पाण्ड्ये	पाण्ड्ययोः	पाण्डुषु
संबोधन–	हे पाण्ड्य	हे पाण्यौः	हे पाण्डवः

कौरव्य (कुरु देश के राजा/पुत्र) पुलिङ्ग

प्रथमा –	कौरव्यः	कौरव्यौ	कुरवः
द्वितीया –	कौरव्यम्	कौरव्यौ	कुरून्
तृतीया –	कौरव्येण	कौरव्याभ्याम्	कुरुभिः
चतुर्थी –	कौरव्याय	कौरव्याभ्याम्	कुरुभ्यः
पंचमी –	कौरव्यात्–द्	कौरव्याभ्याम्	कुरुभ्यः
षष्ठी –	कौरव्यस्य	कौरव्ययोः	कुरूणाम्
सप्तमी –	कौरव्ये	कौरव्योः	कुरुषु
संबोधन –	हे कौरव्य	हे कौरव्ययोः	हे कुरवः

28.6 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. लघसिद्धान्तकौमुदी (हिन्दी, संस्कृत एवं अन्य भाषाओं में) व्याख्या।
2. वैयाकरण सिद्धान्त कौमुदी, बालमनोरमा टीका सहित। चौखम्बा, मोतीलाल या अन्य किसी प्रकाशन से प्रकाशित।
3. वैयाकरण सिद्धान्त रत्नाकरः (भाग–2) प्रो. आजाद मिश्र।
4. संस्कृत के प्रत्ययों का भाषा शास्त्रीय पर्यालोचन, आजाद मिश्र।
5. रूप चन्द्रिका, रामचन्द्र झा, चौखम्बा संस्कृत सिरीज, वाराणसी।

28.7 अभ्यास प्रश्न

1. भामेयः, राधेयः, और्मिलेयः, दात्तेयी इन शब्दों में विग्रह– पुरस्सर प्रत्यय बताइए।
2. राजन्यः और राजनः शब्दों के अर्थ में भेद को स्पष्ट करें।
3. किस प्रत्यय के आदि वर्ण को 'इक्' 'इ' 'य्' और एय् आदेश किस सूत्र से होते हैं।
4. तद्राज संज्ञा किन प्रत्ययों की होती है और उन प्रत्ययों के अर्थ क्या होते हैं।
5. लुक् और लोप शब्दों के अर्थ में क्या भेद है?
6. सूत्र कितने प्रकार के होते हैं। इस पाठ में अतिदेश वार्तिक और नियम वार्तिक कौन से है।
7. क्षत्रियः और क्षात्रिः शब्दों के अर्थ में क्या भेद है?

इकाई 29 मत्वर्थीय प्रत्यय

इकाई की रूपरेखा

29.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरांत शिक्षार्थी –

- जान सकेंगे कि इकाई का प्रधान प्रत्यय मतुप् है।
- मतुबर्थ – मत्वर्थ से सम्बन्धित मत्वर्थीय प्रत्यय, उनका मूल स्वरूप, प्रायोगिक रूप और उनके अर्थ का अध्ययन शिक्षार्थी इस इकाई में करेंगे।
- हिन्दी में मतुप् का विकास 'वाला' रूप में हुआ है, जैसे – धनवाला, ज्ञानवाला, घरवाली इत्यादि की रूपसिद्धि भी वे जान सकेंगे; तथा
- रूपसिद्धि प्रक्रिया द्वारा शिक्षार्थियों को इन – 'वाला' आदि अर्थों में संस्कृत के प्रयोग का अभ्यास होगा।

29.1 प्रस्तावना

तद्धित प्रकरण के पिछले दो पाठों के अध्ययन से स्पष्ट होता है कि तद्धित प्रत्यय प्रकृत्यर्थ के संबन्धी अर्थ का बोध कराते हैं। जैसे – 'दाक्षि' में इञ् प्रत्यय प्रकृत्यर्थ 'दक्ष' का संबन्धी अपत्य अर्थ का बोधक है।

महर्षि पाणिनि ने अष्टाध्यायी के चौथे और पाँचवें अध्याय के सूत्रों से तद्धित प्रत्ययों और उनके अर्थों का विधान किया है। जैसे – तस्यापत्यम्, ते तद्राजा, तस्य समूहः, तत्र भवः, तेन रक्तं रागात्– इत्यादि सूत्रों से अपत्य, राजा, समूह, भव, रक्त (रंगा गया) इत्यादि 141 अर्थों का विधान हुआ है। इन अर्थों के मुख्यतः पाँच विभाग है। प्रत्येक विभाग का एक अधिकारी प्रत्यय होता है जिसे उन अर्थों का सामान्य (उत्सर्ग) प्रत्यय कहते हैं। अण् प्रत्यय के अधिकार में अपत्य, समूह, राज्य, निवास आदि 44 अर्थ हैं। ठक् प्रत्यय के अधिकार में चरति, तरति,

संस्कृतम् इत्यादि 36 अर्थ हैं, जैसे– व्यवहारेण चरति व्यावहारिकः, दध्ना संस्कृतम् दाधिकम् इत्यादि रूप निष्पन्न होते हैं। यत् प्रत्यय के अधिकार में 31 अर्थ हैं, जिनसे सोदर्य, सतीर्य्ह, धन्य आदि शब्द सिद्ध होते हैं। छ प्रत्यय के अधिकार में हित, प्रकृति और संबन्ध की संभावना ये तीन अर्थ हैं। ठञ् प्रत्यय के अधिकार में क्रीत, संयोग, उत्पात आदि 27 अर्थ हैं। इस प्रकार तद्धितार्थ के ये पाँच अधिकारी प्रत्यय हैं। इनके अतिरिक्त भवनार्थक प्रकरण में खेत, खेती और फसल आदि से संबन्धित 42 अर्थ और उनके भिन्न–भिन्न प्रत्यय एक साथ सूत्र में विहित हैं, जिनमें किसी सामान्य प्रत्यय का अधिकार नहीं है। उसी प्रकार मत्वर्थ प्रत्यय भी सामान्य अण् आदि प्रत्ययों के अधिकार से बाहर हैं।

अवधेय है कि इन सभी तद्धित प्रत्ययार्थों का अपने–अपने प्रकृत्यर्थ के साथ एक विशेष संबन्ध होता है जो उन प्रत्ययार्थों से ही प्रकट होता है। जैसे – दाक्षि में प्रकृत्यर्थ दक्ष का प्रत्ययार्थ सन्तान के साथ जन्य–जनक–भाव सम्बन्ध है, उसी तरह 'पाञ्चाल' में प्रकृत्यर्थ पंचाल देश का प्रत्ययार्थ राजा के साथ शास्य–शासक–भाव संबन्ध है। किन्तु इस पाठ में हम स्वामित्व, संयोग या आधार आदि संबन्धों का अध्ययन करेंगे, जो मत्वर्थीय प्रत्ययों से भासित होते हैं। इस पाठ के प्रत्यय अत्यन्त व्यावहारिक, प्रसिद्ध और बहुत प्रचलित हैं। यहाँ उनका स्वरूप, अर्थ और उनकी प्रकृति का अध्ययन प्रस्तुत है।

29.2 मत्वर्थीय प्रत्यय – सूत्र, अर्थ एवं व्याख्या

सूत्र – तदस्यास्त्यस्मिन्निति मतुप् 5/2/94

वृत्तिः – गावः अस्य अस्मिन् वा सन्ति गोमान्।

सूत्र पद विवरण – तद् प्रथमान्त, अस्य षष्ठ्यन्त, अस्ति सत्ता क्रिया का प्रतिरूपक अव्यय, अस्मिन् सप्तम्यन्त इति विशेष विषय का प्रतिबोधक अव्यय, मतुप् प्रथमान्त, कुल छह पद हैं। इस सूत्र में तथा इस प्रकरण के प्रत्यय विधायक सभी सूत्रों में 'समर्थानां प्रथमाद् वा' इस अधिकार सूत्र के तीनों पदों की अनुवृत्ति होती है। अतः सूत्र का प्रथम पद 'तद्' समर्थ प्रथमान्त पद का बोधक है जो 'अस्ति' के समानाधिकरण से सत्ता – क्रिया के कर्ता का बोधक होता है और उसी से प्रत्यय का विधान होता है। 'अस्य' पद षष्ठ्यर्थ और 'अस्मिन्' पद सप्तम्यर्थ का बोधक है।

सूत्रार्थ – 'तद् अस्य अस्ति' अथवा 'तद् अस्मिन् अस्ति' इस विग्रह में अस्ति क्रिया के कर्ता के वाचक कृत – सन्धि समर्थ प्रथमान्त पद से षष्ठ्यर्थ स्वामित्व आदि सम्बन्ध में अथवा सप्तम्यर्थ अधिकरणता संबन्ध में मतुप् प्रत्यय विकल्प से हो, यह आदेश है।

विशेष व्याख्या निम्नवत् है :

1. जब तद्धित वृत्ति का प्रयोग करना चाहेंगे तब मतुप् आदि तद्धित प्रत्यय होंगे, अन्यथा विग्रह वाक्य का प्रयोग होगा, अतः मत्वर्थीय प्रत्यय भी विकल्प से होते हैं। ये प्रत्यय प्रकृत्यर्थ के स्वामी आदि संबन्धी और प्रकृत्यर्थ के अधिकरण के वाचक होने से सार्थक हैं, अर्थात् प्रकृत्यर्थ से भिन्न अर्थ के वाचक हैं, अतः इनका विधान प्रथमान्त पद से होता है।
2. प्रत्यय का विधान होने के बाद प्रथमान्त पद और प्रत्यय समुदाय की 'कृत्तद्धित–समासाश्च' सूत्र से प्रातिपदिक संज्ञा तथा 'सुपो धातु–प्रातिपदिकयोः' सूत्र से प्रथमा विभक्ति का लोप होकर प्रकृति (मूल शब्द) और प्रत्यय शेष रहते हैं।
3. 'मतुप्' प्रत्यय में 'हलन्त्यम्' सूत्र से अन्त्य 'प्' की इत् संज्ञा होती है तथा 'उपेदशेऽजनुनासिक इत्' सूत्र से तकारोत्तर 'उ' की इत् – संज्ञा होती है। तदनन्तर इत् संज्ञक उ और प् का 'तस्य लोप' सूत्र से लोप होने पर इस प्रत्यय में 'मत्' शेष रहता है, जो प्रकृति के साथ जुड़ता है, अतः वही प्रायोगिक रूप है और 'उप्' अनुबन्ध है। अनुबन्ध केवल उच्चारण के लिए होता है, उसका प्रकृति के साथ प्रयोग नहीं होता है।
4. मतुप् में 'उ' अनुबन्ध के कारण यह प्रत्यय 'उगित्' है, अतः 'उगिदचां सर्वनाम स्थानेऽधातोः' सूत्र से स्वादि पांच विभिक्तयों में नुम् आगम होगा। 'प्' अनुबन्ध के कारण यह पित् है। अन्य मत्वर्थीय प्रत्ययों में भी अनुबन्ध हैं जिनका प्रत्यय विधान के समय उल्लेख किया जायगा।
5. मत्वर्थीय प्रत्ययों में ञ्, ण् अथवा क् अनुबन्ध नहीं हैं, अर्थात् ये प्रत्यय ञित्, णित् अथवा कित् नहीं होते, अतः इनका विधान होने पर 'तद्धितेष्वचाम् आदेः' अथवा 'किति च' सूत्र से प्रकृति में आदिवृद्धि नहीं होती है।
6. मतुप् प्रत्यय का अर्थ अस्य = स्वामी आदि संबन्धी और अस्मिन् = अधिकरण है। इन अर्थों में विहित होने वाले इस पाठ के 'इनि' आदि सभी प्रत्ययों को मत्वर्थीय कहते हैं।
7. इस सूत्र में स्थित 'इति' शब्द अर्थों की विशेषता को सूचित करता है। अर्थात् 'अस्ति' की विवक्षा में जो मतुप् आदि प्रत्यय होते हैं, वे अपने सम्बन्धी और अधिकरण अर्थ की विशेषताओं को प्रकट करते हैं। वे विशेषताएँ निम्नांकित हैं–

   भूम – निन्दा – प्रशंसासु नित्ययोगेऽतिशायने।
   संसर्गेऽस्तिविवक्षायां भवन्ति मतुबादयः।।

1. भूमा = अर्थ में बहुत्व या आधिक्य विशेषता को प्रकट करने के लिए मत्वर्थीय प्रत्यय का प्रयोग करते हैं। जैसे– गोमान् = अपने सामर्थ्य से अधिक या बहुत गायों को रखने वाला स्वामी। बहुत या अधिक शब्द सापेक्ष हैं, अतः जो अपने सामर्थ्य की अपेक्षा अधिक गायें रखता है, उसके लिए गोमान् शब्द का प्रयोग करते हैं। जैसे– सामान्य व्यक्ति के लिए चार–पाँच गायें अधिक हैं, किन्तु किसी गोशाला के लिए चार–पाँच सौ गायें अधिक होंगी। अतः 'गोमान् रमेशः' वाक्य से गायों के स्वामी रमेश के पास

अपने सामर्थ्य से अधिक गायों को रखने की सूचना प्रकट होती है। इसी प्रकार 'गोमती शाला' अथवा 'गोमान् जनपदः' वाक्य से गायों का अधिकरण गोशाला अथवा जनपद में सामान्य की अपेक्षा गायों की अधिकता प्रकट होती है।

2. निन्दा– मत्वर्थीय प्रत्यय से निन्दा या बुराई अर्थ भी प्रकट होता है। जैसे– 'ककुदावर्तिनी कन्या' (जिसके कटि– पृष्ठ भाग में बैल के थूहे के समान मांसल आवर्त = घेरा हो, ऐसी कन्या) इससे कन्या के स्वरूप की निन्दा प्रकट होती है। अथवा 'दन्तुरो बालकः' यहाँ दन्त शब्द से उरच् प्रत्यय बालक के दाँतों के सौन्दर्य की निन्दा प्रकट करता है।
3. प्रशंसा– 'रूपवान् पुरुषः' (सुंदर पुरुष) वाक्य में रूप शब्द से विहित मतुप् प्रत्यय पुरुष के रूप की प्रशंसा व्यंजित करता है।
4. नित्ययोग– नित्य सम्बन्ध। जैसे– 'क्षीरिणो वृक्षाः' वाक्य में क्षीर शब्द से विहित इनि प्रत्यय प्रकृत्यर्थ क्षीर = दूध का वृक्ष से नित्य सम्बन्ध अर्थ को व्यक्त करता है। अतः 'सदा दूध वाले वृक्ष' यह अर्थ प्रकट होता है।
5. अतिशायन = अतिशय। जैसे– 'उदरी कुमारः' या 'उदरिणी कन्या' इस वाक्य में इनि प्रत्यय प्रकृत्यर्थ उदर के अपेक्षाकृत बड़े होने की सूचना देता है। अर्थात् बड़े पेट वाला/वाली कुमार/कुमारी।
6. संसर्ग = सहभाव/संबन्ध। जैसे – चक्री, त्रिशूली, दण्डी का क्रमशः चक्रवाला, त्रिशूल वाला और दण्ड धारण करने वाला अर्थ है। इन तद्धितान्त पदों में 'इनि' प्रत्यय प्रकृ त्यर्थ और प्रत्ययार्थ के संसर्ग = संयोग संबन्ध को भी व्यक्त करता है।
7. 'अस्ति' क्रिया पद की विवक्षा में भी मतुप् प्रत्यय होता है। जैसे– अस्तिमान्, अस्तित्ववान्, सत्तावान् इत्यादि।

उक्त विशेषताओं को सूचित करने के लिए भी मतुबर्थीय प्रत्ययों का प्रयोग होता है। विशेष प्रकरण अथवा 'काकु' आदि के प्रयोग से उक्त विशेषताएँ स्पष्ट होती हैं।

इस सूत्र का अर्थ स्पष्ट है, अतः इसकी वृत्ति नहीं की गयी, किन्तु विग्रह के साथ सूत्र का उदाहरण दिया है– गावः अस्य सन्ति अस्मिन् वा सन्ति– गोमान्।

गोमान्– गावः अस्य सन्ति (गाएँ इसकी हैं वह व्यक्ति) अथवा गावः अस्मिन् सन्ति (गाएँ यहाँ हैं, वह देश या जनपद) इस लौकिक विग्रह में तथा 'गो जस् अस्य' अथवा 'गो जस् अस्मिन्' इस अलौकिक विग्रह में अस्ति का समानाधिकरण कर्ता का वाचक प्रथमान्त 'गो जस्' पद से अस्य अथवा अस्मिन् अर्थ में 'तदस्यास्त्यस्मिन्निति मतुप्' सूत्र से मतुप् प्रत्यय होने पर 'अस्य' अथवा 'अस्मिन्' पद का प्रयोग निरस्त हो जाता है, क्योंकि न्याय है– उक्तार्थानाम् अप्रयोगः – जिस अर्थ में प्रत्यय का विधान हो गया उस उक्तार्थक शब्द का प्रयोग नहीं होता, अतः प्रत्यय का विधान हो जाने पर 'गो जस् मतुप्' इस स्थिति में प्रत्यय के अन्तिम अनुबन्ध की 'हलन्त्यम्' सूत्र से तथा 'उपदेशेऽजनुनासिक इत्' सूत्र से प्रत्यय के अन्तिम 'उ' की इत् संज्ञा होने पर 'तस्य लोपः' सूत्र से दोनों इत् संज्ञकों का लोप होकर 'गो जस् मत्' इस समुदाय की 'कृत् तद्धित समासाश्च' सूत्र से प्रातिपदिक संज्ञा होने पर 'सुपो धातु प्रातिपदिकयोः' सूत्र

से मध्यवर्ती विभक्ति का लोप होकर 'गोमत्' मतुबन्त तद्धित प्रातिपदिक से प्रथमा एकवचन में सु विभक्ति होने पर 'उ' अनुबन्ध की इत् संज्ञा और लोप होकर 'गोमत् स्' स्थिति में मतुप् प्रत्यय उगित् होने से 'उगिदचां सर्वनामस्थानेऽधातोः' सूत्र से नुमागम अनुबन्ध लोप होकर 'गोम न् त् स्' इस स्थिति में 'हल्ङ्याब्भ्यो दीर्घात् सु ति स्यपृक्तं हल्' सूत्र से 'स्' का लोप 'संयोगान्तस्य लोपः' सूत्र से 'त्' का संयोगान्त लोप होने पर 'गोमन्' नान्त पद की उपधा मकारोत्तर अकार को 'सर्वनामस्थाने चासम्बुद्धौ' सूत्र से दीर्घ 'आ' होकर गोमान् रूप सिद्ध होता है।

(भ संज्ञा सूत्र)

सूत्र – तसौ मत्वर्थे 1/4/19

वृत्तिः – तान्त–सान्तौ भ– संज्ञौ स्तःय मत्वर्थे प्रत्यये परे। गरुत्मान्। 'वसोः सम्प्रसारणम्' – विदुष्मान्।

सूत्र पद विवरण – तसौ प्रथमा द्विवचनान्त, मत्वर्थे सप्तम्यन्त दो पद हैं। पूर्व सूत्र 'यचि भम्' 1/4/18 से इस सूत्र में अनुवृत्त भम् पद द्विवचन भौ रूप में परिणत हो जाता है।

सूत्रार्थ – तकारान्त और सकारान्त शब्द प्रकृति की भ संज्ञा होती है, मत्वर्थ प्रत्यय पर में रहने पर।

अवधेय – जिस शब्द प्रकृति की भ संज्ञा होती है, उसकी पद संज्ञा नहीं होती, क्योंकि भ संज्ञा पद संज्ञा की बाधिका है। अतः भ संज्ञा होने पर पद संज्ञा निमित्तक कार्य नहीं होते हैं। जैसे उदाहरण देखें।

गरुत्मान् – गरुतः अस्य अस्मिन् वा सन्ति (गरुत् = पंख इसके अथवा इसमें हैं, वह) इस लौकिक विग्रह में तथा 'गरुत् जस् अस्य अस्मिन् वा' इस अलौकिक विग्रह में प्रथमान्त गरुत् पद से 'तदस्यास्त्यस्मिन्निति मतुप्' इस सूत्र से मतुप् प्रत्यय और 'उप्' अनुबन्ध का लोप होने पर 'गरुत् जस् मत्' इस समुदाय की कृत्तद्धित समासाश्च' सूत्र से प्रातिपदिक संज्ञा और 'सुपो धातु प्रातिपदिकयोः' सूत्र से विभक्ति का लोप होने पर 'गरुत् मत्' इति स्थिति में मत्वर्थ प्रत्यय 'मत्' के पर में रहने पर 'तसौ मत्वर्थे' सूत्र से तकारान्त 'गरुत्' प्रकृति की भ संज्ञा होने से 'स्वादिषु असर्वनामस्थाने' सूत्र से प्राप्त पद संज्ञा का बाध हो जाता है, अतः 'झला जशोऽन्ते' सूत्र से 'गरुत्' के तकार को जश्त्व दकार और 'प्रत्यये भाषायां नित्यम्' वार्तिक से दकार को अनुनासिक नकार नहीं होता है। वर्ण सम्मेलन होने पर 'गरुत्मत्' प्रातिपदिक से प्रथमा एकवचन में सु विभक्ति होने पर अनुबन्ध लोप 'गरुत्मत् स्' इस स्थिति में 'उगिदचां सर्वनामस्थानेऽधातोः' सूत्र से नुम् आगम अनुबन्ध लोप 'गरुत्मन् त् स्' इस स्थिति में 'स्' का हल्ङ्यादि लोप, 'त्' का 'संयोगान्त लोप' 'गरुत्मन्' में नान्त की उपधा को 'सर्वनामस्थाने चासम्बुद्धौ' सूत्र से दीर्घ होकर गरुत्मान् रूप निष्पन्न होता है।

'वसोः सम्प्रसारणम्' सूत्र से सम्प्रसारण होकर विदुष्मान् रूप निष्पन्न होता है। यण् (य् व् र् ल्) को क्रमशः इक् (इ उ ऋ लृ) आदेश होना सम्प्रसारण कहलाता है– सूत्र है– 'इग्यणः सम्प्रसारणम्' यह सूत्र सम्प्रसारण संज्ञा करता है।

विदुष्मान् – विद्वांसः अस्य अस्मिन् वा सन्ति (विद्वान् इसके अथवा यहाँ है, वह व्यक्ति अथवा विद्यालय आदि स्थान) इस लौकिक विग्रह में तथा 'विद्वस् जस् अस्य/अस्मिन् वा' इस अलौकिक विग्रह में प्रथमान्त विद्वस् शब्द से 'तदस्यास्त्यस्मिन्निति मतुप्' सूत्र से मतुप् प्रत्यय, अनुबन्ध लोपे होने पर 'विद्वस् जस् मत्' समुदाय की 'कृत्तद्धित समासाश्च' सूत्र से प्रातिपदिक संज्ञा 'सुपो धातु प्रातिपदिकयोः' सूत्र से विभक्ति लोप होने पर 'विद्वस् मत्' स्थिति में 'तसौ मत्वर्थे' सूत्र से सकारान्त प्रकृति विद्वस् की पद संज्ञा बाध कर भ संज्ञा होने के कारण 'वसोः सम्प्रसारणम्' सूत्र से 'व्' को सम्प्रसारण 'उ' होने पर 'विद् उ अ स् मत्' इस स्थिति में 'सम्प्रसारणाच्च' सूत्र से सम्प्रसारण 'उ' से पर में 'अ' का पूर्व रूप होकर उसी में समाहित हो जाने पर 'विद् उ स् मत्' इस स्थिति में 'आदेशप्रत्यययोः' सूत्र से स् को षत्व यानी ष् हो जायेगा, क्योंकि वह 'वसु' आदेश का सकार है। तदनन्तर वर्ण सम्मेलन होकर 'विदुष्मत्' से प्रथमा एक वचन में सु विभक्ति अनुबन्ध लोप, 'उगिदचां सर्वनामस्थानेऽधातोः' सूत्र से नुमागम अनुबन्ध लोप 'विदुष्मन् त् स्' स्थिति में स् का हल्ङ्यादि लोप, त् का संयोगान्त लोप होने पर विदुष्मन् में नान्त की उपधा को 'सर्वनामस्थाने चासम्बुद्धौ' सूत्र से दीर्घ होकर 'विदुष्मान्' रूप सिद्ध होता है। यदि यहाँ 'विद्वस्' की पद संज्ञा हो जाती तो 'वसुस्रंसुध्वंस्वनडुहां दः' सूत्र से स् को द् आदेश हो जाने पर 'विद्वद्मान्' अनिष्ट रूप सिद्ध होता।

('लुक्' का विधान करने वाली वार्तिक)

वार्तिक – गुण–वचनेभ्यो मतुपो लुगिष्टः

पद विवरण – गुणवचनेभ्यः पंचमी बहुवचनान्त, मतुपः षष्ठी एकवचनान्त, लुक् प्रथमान्त और इष्टः प्रथमान्त कुल चार पद हैं।

वार्तिक का अर्थ – गुण के वाचक शब्दों से विहित मतुप् प्रत्यय का लुक् (लोप) वांछित है, अर्थात् लुक् हो।

विशेष –

1. यहाँ वार्तिक में रंग के वाचक शुक्ल, नील, पीत आदि शब्दों का ग्रहण होता है। वे शब्द गुण और गुणी दोनों अर्थों के वाचक होते हैं। अमर कोष में कहा है– गुणे शुक्लादयः पुंसि गुणि– लिङ्गास्तु तद्वति (1/5/17), अर्थात् शुक्ल आदि शब्द जब रंग गुण के वाचक होते हैं तब उनका प्रयोग पुंलिंग में होता है और जब वे गुणवान् अर्थ को प्रकट करते हैं तब गुणवान् के लिंग के समान उनमें लिंग का प्रयोग होता है। जैसे– वस्त्राणां शुक्लो गुणः (वस्त्रों का सफेद रंग है)। यहाँ शुक्ल शब्द का रंग अर्थ में प्रयोग होने से पुलिंग है। इनका गुणवान् में प्रयोग जैसे – शुक्लः पटः, शुक्ला

शाटी, शुक्लं वस्त्रम्। यहाँ गुणवान् अर्थ में विशेषण होने से विशेष्य के समान लिंग का प्रयोग है। एवञ्च वर्ण वाची शब्दों से वाला/वाली अर्थ में विहित मतुप् प्रत्यय का इस वार्तिक से लुक् यानी लोप होता है। अन्य गुणवाची शब्दों से मतुप् का लुक् नहीं होता है। अतः 'शुक्लं वस्त्रम्' के समान 'रूपं वस्त्रम्' का प्रयोग नहीं होगा, अपितु 'रूपवद् वस्त्रम्' प्रयोग होगा।

2. लुक् और लोप समानार्थक होने पर भी इनमें यह अन्तर है कि लोप होने पर प्रत्यय के आश्रित कार्य होते हैं, किन्तु लुक् होने पर प्रत्ययाश्रित कार्य नहीं होते, क्योंकि 'न लुमताङ्गस्य' सूत्र तदाश्रित कार्य का निषेध करता है। पूर्व पाठ में यह विषय उदाहरण के साथ स्पष्ट किया गया है, उसे ध्यान में रखना चाहिए।

शुक्लः पटः – शुक्लः अस्य अस्मिन् का अस्ति– (शुक्ल गुण जिसका/जिसमें है, वह पट) इस लौकिक विग्रह में तथा 'शुक्ल सु अस्य/अस्मिन्' इस अलौकिक विग्रह में वर्णवाची प्रथमान्त शुक्ल शब्द से 'तदस्यास्त्यस्मिन्निति मतुप्' सूत्र से मतुप् प्रत्यय, प्रातिपदिक संज्ञा, विभक्ति लोप होने पर 'शुक्ल मत्' इस स्थिति में 'गुणवचनेभ्यो मतुपो लुगिष्टः' वार्तिक से प्रत्यय का लुक् हो जाने पर शेष 'शुक्ल' प्रकृति ही प्रत्ययार्थ के साथ अपने अर्थ का बोध कराती है, क्योंकि न्याय है – यः शिष्यते स लुप्यमानार्थाभिधायी– अर्थात् जो शेष रहता है, वही लोप हुए के अर्थ का भी अभिधान करता है। यहाँ 'शुक्लः पटः' में विशेष्य पट है। उसमें पुंलिंग है, अतः विशेष्य के अनुसार विशेषण शुक्ल प्रतिपदिक से पुंलिंग प्रथमा के एक वचन में 'सु' विभक्ति अनुबन्ध लोप होने पर 'ससजुषो' रुः' सूत्र से स् को 'रु' अनुबन्ध लोप होने पर 'खरवसानयोः विसर्जनीयः' से 'र्' को विसर्ग होकर शुक्लः रूप सिद्ध होता है।

कृष्णः – कृष्णः अस्य अस्मिन् वा अस्ति (काला रंग इसका अथवा इसमें है, वह) इस लौकिक विग्रह में तथा 'कृष्ण सु अस्य/अस्मिन्' इस अलौकिक विग्रह में वर्ण वाचक प्रथमान्त कृष्ण सु पद से अस्य/अस्मिन् अर्थ में 'तदस्यास्त्यस्मिन्निति मतुप्' सूत्र से मतुप् प्रत्यय, अनुबन्ध लोप, प्रातिपदिक संज्ञा और विभक्ति लोप होने पर 'कृष्ण मत्' स्थिति में 'गुणवचनेभ्यो मतुपो लुगिष्टः' वार्तिक से मतुप् प्रत्यय का लुक् हो जाने पर शेष कृष्ण प्रातिपदिक से प्रथमा एक वचन सु विभक्ति अनुबन्ध लोप रुत्व और विसर्ग होकर कृष्णः रूप निष्पन्न होता है। यह पुंलिंग 'काले वाला' का विशेषण है।

शुक्ल आदि गुण वाचक शब्द – शुक्लः, शुभ्रः, शुचिः, श्वेतः, विशदः, श्येतः, पाण्डरः, अवदातः, सितः, गौरः, अवलक्षः, वलक्षः, धवलः, अर्जुनः। हरिणः, पाण्डुरः, पाण्डुः, धूसरः। कृष्णः, नीलः, असितः, श्यामः, कालः, श्यामलः, मेचकः। पीतः, गौरः, हरिद्राभः। पालासः, पलासः, हरितः, हरित्। लोहितः, रोहितः, रक्तः। शोणः, अरुणः, पाटलः। श्यावः, कपिशः, धूम्रः, धूमलः। कडारः, कपिलः, पिङ्गः, पिशङ्गः, कद्रुः, पिङ्गलः। चित्रम्, कर्मीरः, किर्मीरः, कल्माषः, शबलः, एतः, कर्बुरः। ये कुल 55 शब्द शुक्लादि गुण वाचक हैं। इनसे विहित मत्वर्थ प्रत्यय का प्रकृत वार्तिक से लुक् होता है। ये शब्द गुण = वर्ण का वाचक होने पर पुलिंग होंगे तथा गुणवान् का वाचक होने पर विशेष्य के अनुसार लिंग और वचन से युक्त होंगे।

(लच् प्रत्यय का विधि सूत्र)

सूत्र – प्राणिस्थाद् आतो लजन्यतरस्याम् 5/2/96

वृत्तिः – प्राणिस्थात् किम्? शिखावान् दीपः।

उदाहरणम् – चूडालः – चूडावान्।

सूत्र पद विवरण – प्राणिस्थात् पंचम्यन्त विशेषण, आतः पंचम्यन्त, लच् प्रथमान्त, अन्यतरस्याम् सप्तम्यन्त चार पद हैं।

सूत्रार्थ – प्राणी में स्थित मूर्त अंग के वाचक आकारान्त प्रथमान्त पद से अस्य/अस्मिन् अर्थ में विकल्प से लच् प्रत्यय हो। इस प्रत्यय में 'च्' अनुबन्ध है, इसकी इत् संज्ञा और लोप होने पर केवल 'ल' शेष रहता है। यह प्रत्यय चित् कहलाता है। यह प्रत्यय विकल्प से होता है। इसके अभाव में मतुप् प्रत्यय होगा, अतः एक ही शब्द के दो तद्धितीय रूप निष्पन्न होंगे। मतुप् के अभाव में विग्रह वाक्य का भी प्रयोग होगा।

चूडालः – चूडा अस्य/अस्मिन् वा अस्ति (कलँगी जिसके अथवा जिसमें है, वह मोर, मुर्गा आदि प्राणी) इस विग्रह में तथा 'चूडा स् अस्य/अस्मिन्' इस अलौकिक विग्रह में प्राणी के अंग के वाचक प्रथमान्त चूडा पद से 'प्राणिस्थाद् आतो लजन्यतरस्याम्' सूत्र से लच् प्रत्यय होने पर 'हलन्त्यम्' सूत्र से 'च्' की इत् संज्ञा 'तस्य लोपः' सूत्र से उसका लोप होने पर 'चूडा स् ल' समुदाय की 'कृत्तद्धित समासाश्च' सूत्र से प्रातिपदिक संज्ञा और 'सुपो धातु–प्रातिपदिकयोः' सूत्र से विभक्ति का लोप होने पर 'चूडाल' प्रातिपदिक से प्रथमा एक वचन मो सु विभक्ति और उसको रुत्व – विसर्ग होकर चूडालः रूप सिद्ध होता है।

चूडावान् – चूडा अस्य/अस्मिन् वा अस्ति – इस लौकिक विग्रह में तथा 'चूडा स् अस्य/अस्मिन्' इस अलौकिक विग्रह में प्राणिस्थ अंग वाचक प्रथमान्त चूडा शब्द से लच् प्रत्यय के अभाव में 'तदस्यास्त्यस्मिन्निति मतुप्' सूत्र से मतुप् प्रत्यय अनुबन्ध लोप होने पर 'चूडा स् मत्' समुदाय की प्रातिपदिक संज्ञा और विभक्ति लोप होने पर चूडामत्' स्थिति में 'मादुपधायाश्च मतोर्वोऽयवादिभ्यः' सूत्र से मतुप् के 'म' को 'व' आदेश होने पर 'चूडावत्' प्रातिपदिक से प्रथमा एक वचन सु विभक्ति, 'उगिदचां सर्वनामस्थानेऽधातोः' सूत्र से नुम् आगम अनुबन्ध लोप होने पर 'चूडावन् त् स्' इस स्थिति में 'स्' का हल्ङ्यादि लोप, 'त्' का संयोगान्त लोप होने पर 'चूडावन्' स्थिति में नान्त की उपधा को 'सर्वनामस्थाने चासम्बुद्धौ' सूत्र से दीर्घ होकर चूडावान् रूप सिद्ध होता है।

('व' आदेश का विधि सूत्र)

सूत्र – माद् उपधायाश्च मतोर्वोऽयवादिभ्यः 8/2/9

सूत्रार्थ – मकारान्त, अकारान्त और आकारान्त तथा मकारोपध अकारोपध और आकारोपध शब्द से विहित मतुप् प्रत्यय के मकार को वकार आदेश हो, किन्तु यवादि शब्दों से पर में वकार आदेश न हो।

सूत्र के उदाहरण

1. मकारान्त – किंवान्, इदंवान्

2. अकारान्त – ज्ञानवान्, धनवान्

3. आकारान्त – विद्यावान्, चूडावान्

4. मकारोपध – लक्ष्मीवान्, शमीवान्

5. अकारोपध – वेतस्वान्, यशस्वान्

6. आकारोपध – भास्वान्, सुभास्वान्

शब्द के अन्तिम वर्ण से पूर्व वर्ण को उपधा कहते हैं – 'अलोऽन्त्यात् पूर्व उपधा' उपधा संज्ञा सूत्र अजन्त पुंल्लिंग प्रकरण में है।

यवादि गण – यव शब्द आदि = आरंभ में है जिसके, उस शब्द समूह को यवादि गण कहते हैं। उन शब्दों में मतुप् के मकार को वकार आदेश नहीं होता है। वे शब्द निम्नांकित हैं– यव, दल्मि, उर्मि, ऊर्मि, भूमि, कृमि, क्रुञ्चा, वशा, द्राक्षा, ध्राक्षा, ध्रजि, व्रजि, ध्वजि, निजि, सिजि, सञ्जि, हरित्, ककुद्, मरुत्, गरुत्, इक्षु, द्रु, मधु। ये 23 शब्द यवादि गण हैं। यह आकृति गण है, अतः इनके अतिरिक्त वे शब्द भी इस गण के हैं, जिनमें वकारादेश नहीं मिलता है।

प्राणिस्थात् किम्? शिखावान् दीपः।

'प्राणिस्थाद् आतो लजन्यतरस्याम्' सूत्र में आकारान्त शब्द प्राणी में स्थित अंग का वाचक हो, ऐसा क्यों कहा? इसलिए कि 'शिखा अस्य अस्तीति शिखावान् दीपः (लौ वाला दीप) यहाँ लच् प्रत्यय न हो। यहाँ शिखा प्राणिस्थ नहीं, अपितु दीपस्थ है, इसलिए इस शिखा शब्द से लच् नहीं होगा, किन्तु सामान्य मतुप् होकर 'शिखावान्' रूप होगा।

शिखावान् – 'शिखा अस्य/अस्मिन् अस्ति' इस लौकिक विग्रह में तथा 'शिखा स् अस्य/अस्मिन्' इस अलौकिक विग्रह में प्रथमान्त शिखा शब्द से 'तदस्यास्त्यस्मिन्निति मतुप्' सूत्र से मतुप्, अनुबन्ध लोप 'शिखा स् मत्' समुदाय की प्रातिपदिक संज्ञा और विभक्ति लोप होकर 'शिखा मत्' स्थिति में 'मादुपधायाश्च मतोर्वोऽयवादिभ्यः' सूत्र से मकार को वकार आदेश होने पर 'शिखावत्' प्रातिपदिक से प्रथमा एकवचन में सु विभक्ति, अनुबन्ध लोप, 'उगिदचां सर्वनामस्थानेऽधातोः' सूत्र से नुम् आगम अनुबन्ध लोप होने पर 'शिखावन् त् स्' स्थिति में स्

का हल्ङ्यादि लोप, त् का संयोगान्त लोप और नान्त की उपधा को 'सर्वनामस्थाने चासंबुद्धौ' सूत्र से दीर्घ होकर शिखावान् रूप निष्पन्न होता है।

(नियम वार्तिक)

वार्तिक – प्राण्यङ्गादेव

वार्तिकार्थ – प्राणी में स्थित मूर्त अंग के वाचक आकारान्त शब्द से ही लच् प्रत्यय हो। अतः यहाँ लच् नहीं होगा– मेधावान् (मेधा = धारणावाली बुद्धि से युक्त)। क्योंकि मेधा आकारान्त तो है, प्राणी में रहती भी है, किन्तु प्राणी का मूर्त अंग नहीं है। प्राणी के मूर्त अंग तो हस्त, पाद, ग्रीवा आदि हैं।

मेधावान् – मेधा अस्य/अस्मिन् वा अस्ति – इस लौकिक विग्रह में तथा 'मेधा स् अस्य/अस्मिन्' इस अलौकिक विग्रह में प्रथमान्त मेधा शब्द से 'तदस्यास्त्यस्मिन्निति 'मतुप्' सूत्र से मतुप् अनुबन्धलोप, समुदाय की प्रातिपदिक संज्ञा और विभक्ति लोप होकर 'मेधा मत्' स्थिति में 'मादुपधायाश्च मतोर्वोऽयवादिभ्यः' सूत्र से म को व आदेश होने पर मेधावत् प्रातिपदिक से प्रथमा एक वचन में सु विभक्ति, अनुबन्ध लोप, 'उगिदचाम्–' इत्यादि सूत्र से नुम् आगम अनुबन्धलोप होने पर 'मेधावन् त् स्' स्थिति में हल्ङ्यादि लोप, संयोगान्त लोप और नान्त की उपधा को दीर्घ होकर मेधावान् रूप सिद्ध होता है।

(श – न – इलच् प्रत्यय का विधि सूत्र)

सूत्र – लोमादि–पामादि–पिच्छादिभ्यः शनेलचः 5/2/100

वृत्तिः – लोमादिभ्यः शः, लोमशः – लोमवान्, रोमशः– रोमवान्। पामादिभ्यो नः, पामनः। (ग. सू.) अङ्गात् कल्याणे, अङ्गना। (ग. सू.) लक्ष्म्या अच्च, लक्ष्मणः। पिच्छादिभ्य इलच्, पिच्छिलः–पिच्छवान्।

सूत्र पद विवरण – लोमादिपामादिपिच्छादिभ्यः पंचमी बहुवचनान्त, शनेलचः प्रथमा बहुवचनान्त दो पद हैं। शेष पदों की अनुवृत्ति होती है।

सूत्रार्थ – सूत्र में तीन प्रकार की प्रकृतियों और क्रमशः तीन प्रकार के प्रत्ययों का एक साथ उल्लेख है। वृत्ति में उन्हें उदाहरण के साथ अलग–अलग दर्शाया गया है। उसके अनुसार यहाँ प्रकृतियों का विवरण और उदाहरणों की रूप सिद्धि प्रस्तुत है–

1. लोमादि प्रथमान्त पदों से मत्वर्थ में विकल्प से श प्रत्यय हो। लोमादि गण है। इसमें कुल 9 शब्द हैं– लोमन्, रोमन्, बभ्रु, हरि, गिरि, कर्क, कपि, मुनि और तरु।

लोमशः – लोमवान् – लोमानि सन्ति अस्य अस्मिन् वा – (लोम = रोएँ हैं जिसके/जिसमें, वह) इस लौकिक विग्रह में तथा 'लोमन् जस् अस्य/अस्मिन्' इस अलौकिक विग्रह में प्रथमान्त लोमन् शब्द से 'लोपादि–पामादि– पिच्छादिभ्यः शनेलचः' सूत्र से विकल्प से श प्रत्यय होने

पर 'लोमन् जस् श' समुदाय की प्रातिपदिक संज्ञा और विभक्ति लोप होकर 'लोमन् श' स्थिति में 'स्वादिषु असर्वनाम स्थाने' सूत्र से 'लोमन्' की पद संज्ञा होने पर 'न लोपः प्रातिपदिकान्तस्य' सूत्र से न् का लोप होकर 'लोमश' प्रातिपदिक से प्रथमा एक वचन सु विभक्ति होने पर अनुबन्ध लोप तथा स् को रुत्व–विसर्ग होकर लोमशः रूप की सिद्धि होती है।

लोमवान् – श प्रत्यय के अभाव में 'तदस्यास्त्यस्मिन्निति मतुप्' सूत्र से मतुप्, अनुबन्ध लोप होकर 'लोमन् मत्' इस स्थिति में 'स्वादिषु असर्वनामस्थाने' सूत्र से पद संज्ञा 'न लोपः प्रातिपदिकान्तस्य' सूत्र से न् लोप 'लोम मत्' स्थिति में 'मादुपधायाश्च मतोर्वोऽयवादिभ्यः' सूत्र से म को व आदेश होकर 'लोमवत्' प्रातिपदिक से प्रथमा एक वचन में सु विभक्ति, अनुबन्ध लोप, 'उगिदचाम्–' इत्यादि सूत्र से नुम् आगम अनुबन्ध लोप होकर 'लोमवन् त् स्' स्थिति में स् का हल्ङ्यादि लोप, त् का संयोगान्त लोप, नान्त की उपधा को दीर्घ होकर लोमवान् रूप सिद्ध होता है।

रोमशः – रोमवान् – रोमाणि सन्ति अस्य अस्मिन् (रोम है इसके/इसमें) इस लौकिक विग्रह में तथा 'रोमन् जस् अस्य/अस्मिन इस अलौकिक विग्रह में प्रथमान्त रोमन् शब्द से 'लोमादि–पामादि–पिच्छादिभ्यः शनेलचः' सूत्र से श प्रत्यय होने पर प्रातिपदिक संज्ञा, विभक्ति लोप, पद संज्ञा एवं 'नलोपः प्रातिपदिकान्तस्य' सूत्र से नलोप होकर 'रोमश' प्रातिपदिक से प्रथमा एकवचन में सु विभक्ति रुत्व–विसर्ग होकर रोमशः रूप सिद्ध होता है।

श प्रत्यय के अभाव में 'तदस्यास्त्यस्मिन्निति मतुप्' सूत्र से मतुप् प्रत्यय होने पर 'रोमन् मत्' स्थित में पद संज्ञा न लोप तथा 'मादुपधायाश्च–' इत्यादि सूत्र से वकार आदेश होने पर 'रोमवत्' प्रातिपदिक से प्रथमा एक वचन में सु विभक्ति, नुम् आगम अनुबन्ध लोप होकर 'रोमवन् त् स' स्थिति में हल्ङ्यादि लोप, संयोगान्त लोप एवं उपधादीर्घ होने से 'रोमवान्' रूप सिद्ध होता है।

2. 'लोमादि– पामादि–' सूत्र की दूसरी प्रकृति है– पामादि। प्रथमान्त पामादि शब्दों से न प्रत्यय हो। यथा–पामनः।

पामादि गण में निम्नांकित शब्द हैं– पामन्, वामन्, वेमन्, हेमन्, श्लेष्मन्, कद्रु, कद्रू, वलि, सामन्, ऊष्मन्, कृमि। इन 11 प्रथमान्त पदों से अस्य/अस्मिन् अर्थ में 'न' प्रत्यय हो।

पामनः – पामा अस्य/अस्मिन् अस्ति (पामा = खुजली इसके/इसमें है, वह खुजली वाला) इस लौकिक विग्रह में तथा 'पामन् स् अस्य/अस्मिन्' इस अलौकिक विग्रह में 'लोमादि–पामादि–' इत्यादि सूत्र से न प्रत्यय होने पर प्रातिपदिक संज्ञा और विभक्ति लोप होकर 'पामन् न' इस स्थिति में 'स्वादिषु–' इत्यादि सूत्र से पद संज्ञा 'न लोपः–' इत्यादि सूत्र से न् लोप होकर 'पामन' प्रातिपदिक से प्रथमा एक वचन में सु विभक्ति और उसको रुत्व–विसर्ग होकर पामनः रूप सिद्ध होता है। यहाँ मतुप् प्रत्यय होने पर 'पामवान्' रूप पूर्ववत् प्रथमा एकवचन में सिद्ध होता है।

पामादि गण में गण सूत्र है – (क) अङ्गात् कल्याणे

गण सूत्र का अर्थ – प्रथमान्त अङ्ग शब्द से न प्रत्यय हो, कल्याण = सुन्दर अर्थ में। उदाहरण है – अङ्गना।

अङ्गना – अङ्गानि कल्याणानि सन्ति अस्याः अस्यां वा (अंग सुन्दर हैं इसके/इसमें, वह स्त्री) इस लौकिक विग्रह में प्रथमान्त 'अङ्ग जस्' से 'अङ्गात् कल्याणे' इस गण सूत्र के अनुसार कल्याण अर्थ में 'लोमादि पामादि–' सूत्र से न प्रत्यय होने पर प्रातिपदिक संज्ञा और विभक्ति लोप होकर 'अङ्गन' प्रातिपदिक में स्त्रीत्व की विवक्षा होने से 'अजाद्यतष्टाप्' सूत्र से टाप् प्रत्यय अनुबन्ध लोप 'अङ्गन आ' में सवर्ण दीर्घ प्रथमा एक वचन में सु विभक्ति का हल्ङ्यादि लोप होकर 'अङ्गना' रूप सिद्ध होता है।

अङ्ग से मतुप् प्रत्यय होने पर स्त्रीलिंग में 'अङ्गवती' रूप होता है।

पामादि गण का दूसरा गण सूत्र है – (ख) लक्ष्म्याः अच्च।

अर्थ– प्रथमान्त लक्ष्मी शब्द से न प्रत्यय हो और अन्त्य ईकार को ह्रस्व अकार आदेश हो। उदाहरण– लक्ष्मणः।

लक्ष्मणः – लक्ष्मीः अस्य/अस्मिन् वा अस्ति (लक्ष्मी इसके/इसमें है, वह लक्ष्मी वाला) इस विग्रह में प्रथमान्त 'लक्ष्मी स् ' से 'लक्ष्म्या अच्च' गण सूत्र के अनुसार 'लोमादि पामादि–' इत्यादि सूत्र से न प्रत्यय और अकार आदेश, प्रातिपदिक संज्ञा तथा विभक्ति लोप होकर 'लक्ष्मन' स्थिति में 'अट् कुप्वाङ्नुम्व्यवायेऽपि' सूत्र से णत्व होकर लक्ष्मण प्रातिपदिक से प्रथमा के एक वचन में सु विभक्ति को रुत्व और विसर्ग होकर लक्ष्मणः रूप निष्पन्न होता है।

3. 'लोमादि–पामादि–पिच्छादिभ्यः शनेलचः' सूत्र की तीसरी प्रकृति और प्रत्यय है – पिच्छादिभ्यः इलच्।

अर्थात् पिच्छादि प्रथमान्त पदों से अस्य/अस्मिन् अर्थ में इलच् प्रत्यय विकल्प से हो।

प्रत्यय में 'च' अनुबन्ध है, शेष इल का प्रयोग होता है। यह प्रत्यय अजादि है, अतः भ संज्ञा होगी और प्रकृति के अन्त्य वर्ण का लोप होगा। उदाहरण है – पिच्छिलः – पिच्छवान।

पिच्छादि गण – पिच्छा, उरस्, धुवक, ध्रुवक। जटा घटा काल, वर्ण, उदक, पङ्क और प्रज्ञा। ये 11 शब्द पिच्छादि हैं। इनके आरंभ में पिच्छा शब्द है। कुछ वैयाकरण पिच्छ पाठ करते हैं। पिच्छरू/पिच्छम् (पूंछ) तथा पिच्छा (सेमर का गोंद)। गोंद में फिसलन होती है, अतः तत्त्वबोधिनी निर्णय सागर प्रकाशन मुम्बई में पिच्छा पाठ है।

पिच्छिलः – पिच्छा अस्य अस्मिन् वा अस्ति (पिच्छा = फिसलन इसके/इसमें है, वह फिसलनदार) इस लौकिक विग्रह में प्रथमान्त पिच्छा/पिच्छ शब्द से 'लोमादि पामादि पिच्छादिभ्यः शनेलचः' सूत्र से इलच् प्रत्यय, अनुबन्ध लोप, प्रातिपदिक संज्ञा और विभक्ति लोप

होने पर 'पिच्छा इल' इस स्थिति में भ संज्ञा, 'यस्येति च' सूत्र से अन्त्य आ का लोप होने पर 'पिच्छिल' प्रातिपदिक से प्रथमा एक वचन में सु विभक्ति को रुत्व–विसर्ग होकर पिच्छिलः रूप निष्पन्न होता है।

पिच्छावान्/पिच्छवान् – पिच्छा से मतुप् होने पर 'पिच्छा मत्' स्थिति में वकार आदेश एवं विभक्ति कार्य होकर पिच्छावान् तथा पिच्छ से मतुप् होने पर पिच्छवान् रूप पूर्ववत् सिद्ध होते हैं।

(उरच् प्रत्यय का विधि सूत्र)

सूत्र – दन्त उन्नत उरच् 5/2.106

सूत्र पद विवरण – दन्ते पंचम्यर्थ में सप्तमी एकवचन, उन्नते सप्तम्यन्त प्रकृति का विशेषण, उरच् प्रथमान्त तीन पद हैं।

सूत्रार्थ – प्रथमान्त दन्त शब्द से मत्वर्थ में उरच् प्रत्यय हो, यदि दाँत ऊँचे हों तो। प्रत्यय में 'च्' अनुबन्ध है, अतः यह चित् है।

दन्तुरः – उन्नताः दन्ताः सन्ति अस्य अस्मिन् वा (ऊँचे दाँत हो जिसके/जिसमें, वह) इस विग्रह में प्रथमान्त दन्त शब्द से 'दन्त जस्' स्थिति में 'दन्त उन्नत उरच्' सूत्र से उरच् प्रत्यय अनुबन्ध लोप 'दन्त जस् उर' समुदाय की प्रातिपदिक संज्ञा विभक्ति लोप होने पर 'दन्त उर' स्थिति में भ संज्ञा 'यस्येति च' सूत्र से दन्त के अन्तिम अकार का लोप होने पर 'दन्तुर' प्रातिपदिक से प्रथमा एकवचन में सु विभक्ति को रुत्व– विसर्ग होकर दन्तुरः रूप सिद्ध होता है।

(व प्रत्यय का विधि सूत्र)

सूत्र – केशाद् वोऽन्यतरस्याम् 5/2/109

सूत्र पद विवरण – केशात् पंचम्यन्त, वः प्रथमान्त, अन्यतरस्याम् सप्तम्यन्त तीन पद हैं।

सूत्रार्थ – प्रथमान्त केश शब्द से मत्वर्थ में व प्रत्यय विकल्प से हो। व प्रत्यय के अभाव पक्ष में अदन्त होने से इनि, ठन् तथा सामान्य मतुप् होते हैं। इस प्रकार केश शब्द से क्रमशः चार प्रत्यय होते हैं तथा तद्धित वृत्ति के अभाव में विग्रह वाक्य का भी प्रयोग होता है।

केशवः – केशाः सन्ति अस्य अस्मिन् वा (केश वाला) इस विग्रह में प्रथमान्त केश शब्द से 'केश जस्' इस स्थिति में 'केशाद् वोऽन्यतरस्याम्' सूत्र से व प्रत्यय, प्रातिपदिक संज्ञा, विभक्तिलोप होने पर 'केशव' से प्रथमा एकवचन में सु विभक्ति को रुत्व–विसर्ग होकर केशवः रूप सिद्ध होता है।

केशी – केशाः सन्ति अस्य/अस्मिन् विग्रह में व प्रत्यय के अभाव में 'अत इनिठनौ' सूत्र से इनि और ठन् क्रमशः दो प्रत्यय होंगे, क्योंकि केश शब्द अकारान्त है। इनि में 'इ' अनुबन्ध

का लोप होने पर 'केश इन्' स्थिति में भ संज्ञा यस्येति लोप होने पर 'केशिन्' इन्नन्त प्रातिपदिक से प्रथमा एक वचन में सु विभक्ति होने पर 'सौ च' सूत्र से उपधा के इकार को दीर्घ, हल्ङ्यादि लोप और न लोप होकर केशी रूप सिद्ध होता है।

केशिकः – उक्त विग्रह में 'अत इतिठनौ' से ठन् प्रत्यय, अनुबन्ध लोप 'ठस्येकः' से ठ को इक आदेश होने पर 'केश इक' इस स्थिति में भ संज्ञा यस्येति लोप होकर 'केशिक' से प्रथमा एक वचन में सु विभक्ति को रुत्व–विसर्ग होकर केशिकः रूप सिद्ध होता है।

केशवान् – उक्त विग्रह में केश से 'तदस्यास्त्यस्मिन्निति मतुप्' सूत्र से मतुप् होने पर 'मादुपधायाश्च–' इत्यादि सूत्र से वकार आदेश होकर 'केशवत्' से प्रथमा एक वचन में पूर्ववत् केशवान् रूप सिद्ध होता है।

('व' प्रत्यय विधि वार्तिक)

वार्तिक – अन्येभ्योऽपि दृश्यते।

वार्तिकार्थ – केश शब्द से भिन्न शब्दों से भी मत्वर्थ में व प्रत्यय होता है।

मणिवः – मणिः अस्य अस्मिन् वा अस्ति (मणिवाला नाग विशेष) इस विग्रह में प्रथमान्त मणि शब्द से 'अन्येभ्योऽपि दृश्यते' वार्तिक से व प्रत्यय, प्रातिपदिक संज्ञा, विभक्ति लोप होने पर 'मणिव' से प्रथमा एक वचन में सु विभक्ति को रुत्व– विसर्ग होकर मणिवः रूप सिद्ध होता है।

(व प्रत्यय और स् लोप विधि वार्तिक)

वार्तिक – अर्णसो लोपश्च।

वार्तिकार्थ – प्रथमान्त अर्णस् शब्द से मत्वर्थ में व प्रत्यय और प्रकृति के अन्त्य सकार का लोप हो।

अर्णवः – अर्णांसि सन्ति अस्य अस्मिन् (अर्णस् = जल है जिसका/जिसमें, वह समुद्र) इस विग्रह में प्रथमान्त 'अर्णस् जस्' से 'अर्णसो लोपश्च' वार्तिक से व प्रत्यय और स् का लोप होने पर तथा प्रातिपदिक संज्ञा और विभक्ति का लोप होकर 'अर्णव' से प्रथमा एक वचन में सु विभक्ति को रुत्व–विसर्ग होकर अर्णवः रूप निष्पन्न होता है।

(इनि और ठन् प्रत्यय का विधि सूत्र)

सूत्र – अत इनि – ठनौ 5/2/115

सूत्रार्थ – प्रथमान्त ह्रस्व अकारान्त शब्द से मत्वर्थ में इनि और ठन् प्रत्यय हों। इनि में अन्त्य इ अनुबन्ध है, इन् प्रत्यय का स्वरूप है तथा ठन् में न् अनुबन्ध है और ठ को इक आदेश होता है। पक्ष में मतुप् भी होता है।

दण्डी – दण्डः अस्य अस्मिन् वा अस्ति (दण्ड वाला) इस विग्रह में प्रथमान्त 'दण्ड स्' से 'अत इनि ठनौ' सूत्र से इनि प्रत्यय अनुबन्ध लोप, प्रातिपदिक संज्ञा और विभक्ति लोप होने पर 'दण्ड इन्' स्थिति में भ संज्ञा होने पर 'यस्येति च' सूत्र से डकारोत्तर अकार का लोप होकर इन्नन्त 'दण्डिन्' से प्रथमा एकवचन में सुविभक्ति होने पर 'सौ च' सूत्र से उपधा को दीर्घ, न लोप और सुलोप होकर दण्डी रूप निष्पन्न होता है।

दण्डिकः – उक्त विग्रह में प्रकृत सूत्र से ठन् प्रत्यय, अनुबन्ध लोप 'ठस्येकः' सूत्र से ठ को इक आदेश होने पर 'दण्ड इक' स्थिति में भ संज्ञा यस्येति लोप होकर दण्डिक से प्रथमा एक वचन में सु को रुत्व – विसर्ग होकर यह रूप निष्पन्न होता है।

(इनि और ठन् प्रत्यय का विधि सूत्र)

सूत्र – व्रीह्यादिभ्यश्च 5/2/116

सूत्रार्थ – प्रथमान्त व्रीहि आदि शब्दों से मत्वर्थ में इनि और ठन् प्रत्यय हों। व्रीहि आदि शब्द अदन्त नहीं हैं, अतः पूर्व सूत्र से इनि और ठन् प्राप्त नहीं है।

व्रीह्यादि गण – व्रीहि, माया, शाला, शिखा, माला, मेखला, केका, अष्टका, पताका, चर्मन्, कर्मन्, वर्मन्, दंष्ट्रा, संज्ञा, वडवा, कुमारी, नौ, वीणा, बलाका। यव–खदनौ कुमारी। शीर्षान्नञः। इन शब्दों से मत्वर्थ में इनि और ठन् प्रत्यय होते हैं।

व्रीही – व्रीहिकः – व्रीहयः अस्य अस्मिन् वा सन्ति (धान वाला) इस विग्रह में प्रथमान्त व्रीहि से 'व्रीह्यादिभ्यश्च' सूत्र से इनि और ठन् प्रत्यय होंगे। इन् होने पर व्रीहि की भ संज्ञा और अन्त्य इकार का यस्येति लोप होकर इन्नन्त व्रीहिन् तथा ठन् प्रत्यय होने पर 'ठस्येकः' सूत्र से ठ को इक आदेश भ संज्ञा और यस्येति लोप होकर अकारान्त व्रीहिक शब्द से प्रथमा एकवचन में विभक्ति कार्य होकर ये रूप निष्पन्न होते हैं।

('विनि' प्रत्यय का विधि सूत्र)

सूत्र – अस् – माया – मेधा – स्रजो विनिः 5/2/121

सूत्रार्थ – प्रथमान्त असन्त शब्द से तथा माया, मेधा और स्रज् शब्द से मत्वर्थ में विनि प्रत्यय विकल्प से हो। विनि में इ अनुबन्ध है, विन् प्रत्यय का स्वरूप है।

यशस्वी – यशः अस्य अस्ति (यशवाला) इस विग्रह में प्रथमान्त असन्त 'यशस् स्' स्थिति में 'अस्मायामेधास्रजो विनिः' सूत्र से विनि प्रत्यय अनुबन्ध लोप, प्रातिपदिक संज्ञा, विभक्ति लोप होने पर यशस्विन् से प्रथमा एक वचन में सु विभक्ति होने पर 'सौ च' सूत्र से उपधा दीर्घ हल्ङ्यादि लोप और नलोप होकर यह रूप सिद्ध होता है।

यशस्वान् – उक्त विग्रह में 'तदस्यास्त्यस्मिन्निति मतुप्' सूत्र से मतुप् प्रत्यय अनुबन्ध लोप 'मादुपधायाश्च–' इत्यादि सूत्र से वकार आदेश होकर 'यशस्वत्' से प्रथमा एकवचन में विभक्ति कार्य होकर पूर्ववत् यशस्वान् रूप निष्पन्न होता है।

मायावी – माया अस्य अस्मिन् वा अस्ति (मायावाला, छली) इस विग्रह में प्रथमान्त 'माया स्' से 'अस्मायामेधास्रजो विनिः' सूत्र से विनि प्रत्यय, अनुबन्ध लोप एवं विभक्ति लोप होने पर 'मायाविन्' इन्नन्त से प्रथमा एक वचन में सु विभक्ति होने पर उपधा दीर्घ, हल्ङ्यादि लोप नलोप होकर मायावी तथा मतुप् होने पर मायावान् रूप होते हैं।

मेधावी – मेधा अस्य अस्ति (धारणा शक्तिवाला) इस विग्रह में प्रकृत सूत्र से विनि प्रत्यय होने पर 'मेधाविन्' इन्नन्त से प्रथमा एकवचन में मेधावी तथा मतुप् होने पर मेधावान् रूप सिद्ध होते हैं।

स्रग्वी– स्रग् अस्य अस्ति (स्रक् = माला जिसका/जिसमें हो, वह माला पहना हुआ) इस विग्रह में प्रथमान्त 'स्रज् स्' इस स्थिति में 'अस्मायामेधास्रजो विनिः' सूत्र से विनि प्रत्यय, अनुबन्ध लोप, विभक्ति लोप होकर 'स्रज् विन्' स्थिति में 'स्वादिषु असर्वनामस्थाने' सूत्र से पद संज्ञा होने पर 'चोरू कुः' सूत्र से कुत्व होकर ज् को ग् होने पर स्रग्विन् इन्नन्त प्रातिपदिक से प्रथमा एकवचन में उपधा दीर्घ हल्ङ्यादि लोप न लोप होकर स्रग्वी तथा मतुप् होने पर स्रग्वान् रूप निष्पन्न होते हैं।

('ग्मिन्' प्रत्यय का विधि सूत्र)

सूत्र – वाचो ग्मिनिः 5/2/124

सूत्रार्थ – प्रथमान्त वाच् शब्द से मत्वर्थ में ग्मिनि प्रत्यय हो। प्रत्यय का अन्त्य इकार इत् संज्ञक अनुबन्ध है, अतः इसका स्वरूप ग्मिन् है। 'लशक्वतद्धिते' सूत्र से प्रत्यय के गकार की इत् संज्ञा नहीं होती है, क्योंकि यह तद्धित प्रत्यय है। यद्यपि वाच् के चकार को कुत्व होकर गकार हो सकता है, फिर भी प्रत्यय में गकार इसलिए किया है कि 'प्रत्यये भाषायां नित्यम्' वार्तिक से अनुनासिक न हो। अन्यथा मकार पर में होने से ग् को अनुनासिक ङ् होता।

वाग्ग्मी – वाचः अस्य सन्ति (अच्छा बोलने वाला) इस विग्रह में प्रथमान्त 'वाच् जस्' से 'वाचो ग्मिनिः' सूत्र से ग्मिनि प्रत्यय अनुबन्ध लोप होने पर 'वाच् ग्मिन्' स्थिति में 'स्वादिषु असर्वनामस्थाने' सूत्र से पद संज्ञा 'झलां जश् झशि' सूत्र से जशत्व होकर वाच् के चकार को जकार होने पर 'चोः कुः' सूत्र से उसको गकार होकर वाग्ग्मिन् से प्रथमा एक वचन में पूर्ववत् उपधा दीर्घ, सुलोप एवं नलोप होकर वाग्ग्मी रूप सिद्ध होता है। इस शब्द में दो गकार हैं। प्रत्यय से प्रशंसा सूचित होती हैय अतः अच्छे वक्ता को वाग्ग्मी कहते हैं।

('अच्' प्रत्यय का विधि सूत्र)

सूत्र – अर्श आदिभ्योऽच् 5/2/127

सूत्रार्थ – प्रथमान्त अर्शस् आदि शब्दों से मत्वर्थ में अच् प्रत्यय हो। प्रत्यय में 'च्' इत्संज्ञक अनुबन्ध है, प्रत्यय का स्वरूप है– अ, यह चित् है।

अर्श आदि गण है। इसमें निम्नांकित शब्द हैं– अर्शस्, उरस्, तुन्द, चतुर, कलित, जटा, घटा, घाटा, अभ्र, अघ, कर्दम, अम्ल, लवण। स्वाङ्गाद् हीनात् (अंग विकार के वाचक)। वर्णात् (ककारादि वर्ण वाची)। अर्श आदि आकृति गण है। अर्थात् जिन शब्दों से मत्वर्थ की प्रतीति हो और अन्य मत्वर्थीय प्रत्यय का विधान किसी सूत्र से न हुआ हो तो ऐसे शब्दों को इस गण का समझ लेना चाहिए। जैसे– पाप शब्द पापवाला अर्थ में प्रयुक्त हो तो उसे इस गण का समझ कर अच् प्रत्यय से सिद्ध कर लेना चाहिए। यह प्रत्यय होने पर रूप में कोई अन्तर नहीं पड़ता क्योंकि भ संज्ञक प्रकृति के अन्त्य अच् का यस्येति लोप हो जाता है और प्रत्यय का अ उसमें मिल जाता है।

अर्शसः – अर्शांसि सन्ति अस्य अस्मिन् वा (बवासीर रोगवाला) इस विग्रह में प्रथमान्त 'अर्शस् जस्' स्थिति में 'अर्श आदिभ्योऽच्' सूत्र से अच् प्रत्यय, अनुबन्ध लोप, प्रातिपदिक संज्ञा और विभक्ति लोप होने पर 'अर्शस् अ' स्थिति में सम्मेलन से अकारान्त 'अर्शस' शब्द से प्रथमा एकवचन में सु को रुत्व– विसर्ग होकर यह रूप सिद्ध होता है।

('युस्' प्रत्यय का विधि सूत्र)

सूत्र – अहं शुभमोर्युस् 5/2/140

सूत्रार्थ – अहम् और शुभम् – इस मकारान्त अव्ययों से मत्वर्थ में युस् प्रत्यय हो। युस् में अन्त्य स् की इत् संज्ञा और 'तस्य लोपः' से लोप होता है, अतः यह प्रत्यय सित् है। इसमें 'यु' प्रत्यय स्वरूप है।

अहंयुः – अहम् = अहंकारः अस्य अस्मिन् वा अस्ति (अहंकारी) इस विग्रह में 'अहम्' अव्यय से 'अहंशुभमोर्युस्' सूत्र से युस् प्रत्यय अनुबन्ध लोप होकर 'अहम् यु' स्थिति में सित् प्रत्यय पर में होने से अहम् प्रकृति की 'सिति च' वार्तिक से पद संज्ञा होने पर 'मोऽनुस्वारः' सूत्र से अनुस्वार होकर 'अहंयु' प्रातिपदिक से प्रथमा एकवचन में सु विभक्ति को रुत्व–विसर्ग होकर 'अहंयुः' रूप सिद्ध होता है।

शुभंयुः – शुभम् = कल्याणम् अस्य अस्मिन् वा अस्ति (शुभ से युक्त) इस विग्रह में शुभम् अव्यय से 'अहंशुभमोर्युस्' सूत्र से यु होने पर अनुबन्धलोप 'सिति च' वार्तिक से प्रकृति की पद संज्ञा 'मोऽनुस्वारः' सूत्र से अनुस्वार होकर 'शुभंयु' प्रातिपदिक से प्रथमा एकवचन में सु विभक्ति को रुत्व–विसर्ग होकर यह रूप निष्पन्न होता है।

इति मत्वर्थीयाः – मत्वर्थीय प्रत्ययों का प्रकरण यहां पूर्ण होता है।

29.3 सारांश

हिन्दी में धनवाला, बलवाला आदि शब्दों में 'वाला' से जो अर्थ प्रकट होता है, उसे मत्वर्थ कहते हैं। मत्वर्थ के बोधक प्रत्ययों को मत्वर्थीय कहते हैं। इस पाठ में निम्नांकित मत्वर्थीय प्रत्ययों का अध्ययन हुआ है– मतुप्, लच्, श, न, इलच्, उरच्, व, इनि, ठन्, विनि, ग्मिनि, अच् और युस्, ये सभी अल्प विराम है। ये सारे प्रत्यय प्रथमान्त पद से विहित होते हैं। इनमें मतुप् सभी प्रकृतियों से होता है, अतः उसे सामान्य प्रत्यय तथा शेष प्रत्यय विशेष प्रकृतियों से होते हैं, अतः उन्हें विशेष प्रत्यय कहते हैं। इस प्रकार मतुप् तथा शेष प्रत्ययों में सामान्य–विशेष–भाव होने पर भी परस्पर बाध्य–बाधक–भाव नहीं हैं, अतः जहाँ दूसरे प्रत्यय होते हैं वहाँ मतुप् भी होता है, जैसे – मेधावी – मेधावान्, अहंयु – अहंवान्, धनिकः –धनवान् इत्यादि।

नील, पीत आदि वर्ण के वाचक शब्दों से मतुप् का लुक् हो जाता है, अतः वे गुण और गुणी दोनों अर्थों के प्रकरणानुसार वाचक होते हैं। रूप सिद्धि में मत्वर्थीय प्रत्ययों के विधान से प्रकृ ति के आदि अच् में वृद्धि नहीं होती, किन्तु इलच्, उरच्, इनि, अच् और इक (ठन्) प्रत्ययों का विधान होने पर प्रकृति की भ संज्ञा होने से उसके अन्तिम अच् का यस्येति लोप होता है। इन प्रत्ययों के विधान से तकारान्त, इन्नन्त (नकारान्त) और अकारान्त तद्धित प्रातिपदिक निष्पन्न होते हैं। जैसे– गोमत्, मेधावत्, दण्डिन्, ज्ञानिन्, दन्तुर, अर्णव इत्यादि। सभी विभक्तियों में भगवत्, विद्यार्थिन्, और बालक जैसे इनके रूप होंगे।

मत्वर्थीय प्रत्ययों से निष्पन्न सभी तद्धित शब्द विशेषण होते हैं, अतः तीनों लिंगों में इनका प्रयोग होता है।

29.4 शब्दावली

शब्द (पुलिंग)	अर्थ	स्त्रीलिंग
गोमान्	गौ वाला	गोमती
गरुत्मान्	पंख वाला (गरुड)	गरुत्मती
विदुष्मान्	विद्वानों से शोभित	विदुष्मती
शुक्लः	श्वेत (वस्त्रादि)	शुक्ला
कृष्णः	काला (पट आदि)	कृष्णा
चूडालः	चूडा या मुकुट वाला	चूडाला
शिखावान्	लौ/चोटी वाला (दीपक)	शिखावती
मेधावान्	बुद्धिमान्	मेधावती
लोमशः, रोमशः	रोएँ वाला	लोमशा, रोमशा

पामनः	खुजली रोग वाला	पामना
अङ्गना (स्त्रीलिंग)	सुन्दरी महिला	—
लक्ष्मणः	लक्ष्मीवान्	लक्ष्मणा
पिच्छिलः, पिच्छवान्	चिकना	पिच्छिला, पिच्छवती
दन्तुरः	दँतुरा	दन्तुरा
केशवः	उत्तम केशों वाला	केशवी
मणिवः	मणिवाला (नाग)	मणिवी
अर्णवः	समुद्र	—
दण्डी, दण्डिकः	दण्ड वाला	दण्डिनी, दण्डिका
व्रीही, व्रीहिकः	धान वाला	व्रीहिणी, व्रीहिका
यशस्वी	कीर्तिमान	यशस्विनी
मायावी	मायावाला (छली)	मायाविनी
मेधावी	बुद्धिमान्	मेधाविनी
स्रग्वी	माला पहिने हुए	स्राग्विणी
वाग्ग्मी	अच्छा बोलने वाला	वाग्ग्मिनी
अर्शसः	बवासीर का रोगी	अर्शसा
अहंयुः	अहंकारी	अहंयुः
शुभंयुः	कल्याणकारी	शुभंयुः

29.5 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. लघुसिद्धान्तकौमुदी (हिन्दी आदि भाषाओं में व्याख्याओं के साथ) अनेक प्रकाशकों के पास उपलब्ध।
2. रूप चन्द्रिका, श्रीरामचन्द्र झा, चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस, वाराणसी
3. रचनानुवाद कौमुदी, श्री कपिलदेव द्विवेदी।
4. संस्कृत के प्रत्ययों का भाषाशास्त्रीय पर्यालोचन, प्रो. आजादमिश्र।

5. वैयाकरणसिद्धान्तरत्नाकरः भाग–2, प्रो. आजादमिश्र।
6. अष्टाध्यायी सूत्रपाठः, प्रो. पुष्पा दीक्षित।
7. तद्धितान्ताः केचन शब्दाः – प्रो. भागीरथ प्रसाद त्रिपाठी।

29.6 अभ्यास प्रश्न

1. धन, ज्ञान, विद्या, अर्थ और मनस् शब्दों से मतुप् करने पर पुंलिंग और स्त्रीलिंग प्रथमा एक वचन में क्या रूप निष्पन्न होंगे?
2. वाग्ग्मी और वाग्ग्वान् में कौन प्रत्यय हैं? स्त्रीलिंग में इनके क्या रूप होंगे?
3. दण्डी स्रग्वी, मायावी और अर्णवः में कौन–से प्रत्यय हैं।
4. दन्तुरः, पिच्छिलः, लोमशः और पामनः शब्दों के अर्थ बतावें।
5. शुभंयुः, अर्शसः, रोमशः और शुक्लः रूपों की सिद्धि करें।
6. मत्वर्थ प्रत्ययों के विधान के बाद प्रकृति में आदिवृद्धि क्यों नहीं होती?
7. किस प्रत्यय के पर में रहने पर प्रकृति की भ संज्ञा होती है?